# गोदान

## (मुंशी प्रेमचंद)

### प्रेमचंद : जीवन परिचय

प्रेमचंद (31 जुलाई, 1880-08 अक्टूबर, 1936 ) हिन्दी और उर्दू के महानतम भारतीय लेखकों में से एक हैं। प्रेमचंद का मूल नाम धनपत राय श्रीवास्तव था, जिन्हें नवाब राय और मुंशी प्रेमचंद के नाम से भी जाना जाता है। उपन्यास के क्षेत्र में उनके योगदान को देखकर बंगाल के विख्यात उपन्यासकार शरतचंद्र चट्टोपाध्याय ने उन्हें 'उपन्यास सम्राट' कहकर संबोधित किया था।

प्रेमचंद ने हिन्दी कहानी और उपन्यास की एक ऐसी परंपरा का विकास किया जिसने पूरी सदी के साहित्य का मार्गदर्शन किया। आगामी एक पूरी पीढ़ी को गहराई तक प्रभावित कर प्रेमचंद ने साहित्य की यथार्थवादी परंपरा की नींव रखी। उनका लेखन हिन्दी साहित्य की एक ऐसी विरासत है जिसके बिना हिन्दी के विकास का अध्ययन अधूरा होगा। वे एक संवेदनशील लेखक, सचेत नागरिक, कुशल वक्ता तथा सुधी व विद्वान संपादक थे। बीसवी सदी के पूर्व में जब हिन्दी में तकनीकी सुविधाओं को अभाव था, उनका योगदान अतुलनीय है।

प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई 1880 को वाराणसी के निकट लमही गाँव में हुआ था। उनकी माता का नाम आनन्दी देवी था तथा पिता मुंशी अजायबराय लमही में डाकमुंशी थे। उनकी शिक्षा का आरंभ उर्दू, फारसी से हुआ और पढ़ने का शौक उन्हें बचपन से ही लग गया। 13 साल की उम्र में ही उन्होंने तिलिस्म-ए-होशरुबा पढ़ लिया और उन्होंने उर्दू के मशहूर रचनाकार रतननाथ शरसार, मिर्जा हादी रुस्वा और मौलाना शरर के उपन्यासों से परिचय प्राप्त कर लिया।।

1898 में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक स्थानीय विद्यालय में शिक्षक नियुक्त हो गए। नौकरी के साथ ही उन्होंने पढ़ाई जारी रखी। 1910 में उन्होंने अंग्रेजी, दर्शन, फारसी और इतिहास लेकर इंटर पास किया और 1919 में बीए पास करने के बाद शिक्षा विभाग के इंस्पेक्टर पद पर नियुक्त हुए।

सात वर्ष की अवस्था में उनकी माता तथा चौदह वर्ष की अवस्था में पिता का देहान्त हो जाने के कारण उनका प्रारंभिक जीवन संघर्षमय रहा। उनका पहला विवाह उन दिनों की परंपरा के अनुसार पंद्रह साल की उम्र में हुआ जो सफल नहीं रहा। वे आर्य समाज से प्रभावित रहे जो उस समय का बहुत बड़ा धार्मिक और सामाजिक आंदोलन था। उन्होंने विधवा-विवाह का समर्थन किया और 1906 में दूसरा विवाह अपनी प्रगतिशील परंपरा के अनुरूप बाल-विधवा शिवरानी देवी से किया। उनकी तीन संताने हुई श्रीपत राय, अमृत राय और कमला देवी श्रीवास्तव।

### कार्यक्षेत्र

यों तो उनके साहित्यिक जीवन का आरंभ 1901 से हो चुका था, पर उनकी पहली हिन्दी कहानी सरस्वती पत्रिका के दिसम्बर अंक में 1915 में 'सौत' नाम से और 1936 में अंतिम कहानी 'कफन' नाम से प्रकाशित हुई। बीस वर्षों की इस अवधि में उनकी कहानियों के अनेक रंग देखने को मिलते हैं। उनके पहले हिंदी में काल्पनिक, ऐय्यारी और पौराणिक धार्मिक रचनाएं ही की जाती थी।

प्रेमचंद ने हिंदी में यथार्थवाद की शुरुआत की। भारतीय साहित्य का बहुत-सा विमर्श जो बाद में प्रमुखता से उभरा चाहे वह दलित साहित्य हो या नारी साहित्य उसकी जड़ें कहीं गहरे प्रेमचंद के साहित्य में दिखाई देती हैं। प्रेमचंद के लेख के अनुसार उनकी पहली रचना अपने मामा पर लिखा व्यंग्य थी, जो अब अनुपलब्ध है।

प्रेमचंद का पहला उपलब्ध लेखन उर्दू उपन्यास 'असरारे मआबिद' है। प्रेमचंद का दूसरा उपन्यास 'हमखुर्मा' व 'हमसवाब' जिसका हिंदी रूपांतरण 'प्रेमा' नाम से 1907 में प्रकाशित हुआ। इसके बाद प्रेमचंद का पहला कहानी संग्रह 'सोजे-वतन' नाम से आया जो 1908 में प्रकाशित हुआ। सोजे-वतन यानी देश का दर्द देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत होने के कारण इस पर अंग्रेजी सरकार ने रोक लगा दी और भविष्य में इस तरह का लेखन न करने की चेतावनी दी।

इस समय तक प्रेमचंद, धनपत राय नाम से लिखते थे। उर्दू में प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'जमाना' के संपादक और उनके अजीज दोस्त मुंशी दया नारायण निगम

ने उन्हें प्रेमचंद नाम से लिखने की सलाह दी। इसके बाद वे 'प्रेमचंद' के नाम से लिखने लगे।

'प्रेमचंद' नाम से उनकी पहली कहानी 'बड़े घर की बेटी' जमाना पत्रिका के दिसम्बर 1910 के अंक में प्रकाशित हुई। मरणोपरांत उनकी कहानियाँ 'मानसरोवर' नाम से 8 खंडों में प्रकाशित हुई। कथा सम्राट प्रेमचन्द की कहना था कि साहित्यकार देशभक्ति और राजनीति के पीछे चलने वाली सच्चाई नहीं बल्कि उसके आगे मशाल दिखाते हुए चलने वाली सच्चाई है। यह बात उनके साहित्य में उजागर हुई है।

1921 में उन्होंने महात्मा गांधी के आह्वान पर अपनी नौकरी छोड़ दी। कुछ महीने मर्यादा पत्रिका का संपादन भार संभाला, छह साल तक माधुरी नामक पत्रिका का संपादन किया। 1930 में बनारस से अपना मासिक पत्र 'हंस' शुरू किया और 1932 के आरंभ में 'जागरण' नामक एक साप्ताहिक और निकाला।

उन्होंने लखनऊ में 1936 में 'अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ' के सम्मेलन की अध्यक्षता की। उन्होंने मोहन दयाराम भवनानी की अजंता सिनेटोन कंपनी में कहानी-लेखक की नौकरी भी की। 1934 में प्रदर्शित 'मजदूर' नामक फिल्म की कथा लिखी और कांट्रैक्ट की सालभर की अवधि पूरी किए बिना ही दो महीने का वेतन छोड़कर बनारस भाग आये क्योंकि बंबई का और उससे भी ज्यादा वहाँ की फिल्मी दुनिया का हवा-पानी उन्हें रास नहीं आया।

उन्होंने मूल रूप से हिंदी में 1915 से कहानियां लिखना और 1918 में 'सेवासदन' से उपन्यास लिखना शुरू किया। प्रेमचंद ने कुल करीब 300 कहानियाँ, कुल 15 उपन्यास और 3 नाटक, 10 अनुवाद, 7 बाल-पुस्तके तथा हजारी पृष्ठों के लेख, सम्पादकीय, भाषण, भूमिका, पत्र आदि की रचना की लेकिन जो यश और प्रतिष्ठा उन्हें उपन्यास और कहानियों से प्राप्त हुई, वह अन्य विधाओं से प्राप्त न हो सकी।

प्रेमचंद की कई साहित्यिक कृतियों का अंग्रेजी, रूसी, जर्मन सहित अनेक भाषाओं में अनुवाद भी हुआ। 'गोदान' उनकी कालजयी रचना है। 'कफन' उनकी अंतिम कहानी मानी जाती है। उन्होंने हिंदी और उर्दू में पूरे अधिकार से लिखा। उनकी अधिकांश रचनाएं मूल रूप से उर्दू में लिखी गई हैं लेकिन उनका प्रकाशन हिंदी में पहले हुआ। तैंतीस वर्षों के रचनात्मक जीवन में वे साहित्य की ऐसी विरासत सौंप गए जो गुणों की दृष्टि से अमूल्य है और आकार की दृष्टि से असीमित।

## कृतियां

***1. असरारे मआबिद उर्फ 'देवस्थान रहस्य-*** *एक उर्दू साप्ताहिक 'आवाज-ए-खल्क' में 8 अक्टूबर,1903 से 1 फरवरी, 1905 तक प्रकाशित।*

***2. सेवासदन (1918)***

***3. प्रेमाश्रम (1922)***

***4. रंगभूमि (1925)***

***5. निर्मला (1925)***

***6. कायाकल्प (1927)***

***7. गबन (1929)***

***8. कर्मभूमि (1932)***

***9. गोदान (1936)***

***10. मंगलसूत्र (अपूर्ण)***

## उपन्यास

प्रेमचंद के उपन्यास न केवल हिन्दी उपन्यास साहित्य में बल्कि संपूर्ण भारतीय साहित्य में मील के पत्थर हैं। प्रेमचन्द के कथा-साहित्य में उनके उपन्यासकार रूप का आरंभ पहले होता है। उनका पहला उर्दू उपन्यास 'असरारे मआबिद' उर्फ 'देवस्थान रहस्य' उर्दू साप्ताहिक 'आवाज-ए-खल्क' में 8 अक्टूबर, 1903 से फरवरी, 1905 तक धारावाहिक के रूप में प्रकाशित हुआ। उनका दूसरा उपन्यास 'हमखुर्मा व हमसवा' जिसका हिंदी रूपांतरण 'प्रेमा' नाम से 1907 में प्रकाशित हुआ। चूंकि प्रेमचंद मूल रूप से उर्दू के लेखक थे और उर्दू से हिंदी में आए थे, इसलिए उनके सभी आरंभिक उपन्यास मूल रूप से उर्दू में लिखे गए, बाद में उनका हिन्दी अनुवाद किया गया।

उन्होंने 'सेवासदन' (1918) से हिंदी उपन्यास की दुनिया में प्रवेश किया। यह मूल रूप से उन्होंने 'बाजारे हुस्न' नाम से पहले उर्दू में लिखा लेकिन इसका हिंदी रूपांतरण 'सेवासदन' पहले प्रकाशित कराया। सेवासदन एक नारी के वेश्या बनने की कहानी है। डॉ. रामविलास शर्मा के अनुसार सेवासदन में व्यक्त मुख्य समस्या भारतीय नारी की पराधीनता है।

इसके बाद किसानी जीवन पर उनका पहला उपन्यास 'प्रेमाश्रम' (1921) आया। इसका मसौदा भी पहले

उर्दू में 'गोशाए आफियत' नाम से तैयार हुआ था लेकिन सेवासदन की भांति इसे भी पहले हिंदी में प्रकाशित कराया। प्रेमाश्रम किसानी जीवन पर लिखा हिंदी का संभवतः पहला उपन्यास है। यह अवध के किसान आंदोलनों के दौर में लिखा गया।

इसके बाद 'रंगभूमि' (1925), 'कायाकल्प' (1926), 'निर्मला' (1927), 'गबन' (1931), 'कर्मभूमि' (1932) से होता हुआ यह सफर 'गोदान' (1936) तक पूर्णता को प्राप्त हुआ। रंगभूमि में प्रेमचंद एक अंधे भिखारी सूरदास को कथा का नायक बनाकर हिंदी कथा साहित्य में क्रांतिकारी बदलाव का सूत्रपात कर चुके थे। 'मंगलसूत्र प्रेमचंद का अधूरा उपन्यास है। प्रेमचंद के उपन्यासों का मूल कथ्य भारतीय ग्रामीण जीवन था।

प्रेमचंद ने हिंदी उपन्यास को जो ऊँचाई प्रदान की, वह परवर्ती उपन्यासकारों के लिए एक चुनौती बनी रही। प्रेमचंद के उपन्यास भारत और दुनिया की कई भाषाओं में अनुदित हुए, खासकर उनका सर्वाधिक चर्चित उपन्यास गोदान।

## गोदान

'गोदान' प्रेमचन्द का अंतिम और सबसे महत्वपूर्ण उपन्यास माना जाता है। कुछ लोग इसे उनकी सर्वोतम कृति भी मानते हैं। इसका प्रकाशन 1936 ई० में हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई द्वारा किया गया था। इसमें भारतीय ग्राम समाज एवं परिवेश का सजीव चित्रण है।

गोदान ग्राम्य जीवन और कृषि संस्कृति का महाकाव्य है। इसमें प्रगतिवाद, गांधीवाद और मार्क्सवाद-साम्यवाद का पूर्ण परिप्रेक्ष्य में चित्रण हुआ है। 'गोदान' का हिंदी साहित्य ही नहीं, विश्व साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें प्रेमचंद की साहित्य संबंधी विचारधारा 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' से 'आलोचनात्मक यथार्थवाद' तक की पूर्णता प्राप्त करती है। एक सामान्य किसान को पूरे उपन्यास का नायक बनाना भारतीय उपन्यास परंपरा की दिशा बदल देने जैसा था।

सामंतवाद और पूँजीवाद के चक्र में फंसकर हुई कथानायक होरी की मृत्यु पाठकों के जहन को झकझोर कर रख जाती है। किसानी जीवन पर अपने पिछले उपन्यासों 'प्रेमाश्रम' और 'कर्मभूमि' में प्रेमंचद यथार्थ की प्रस्तुति करते-करते उपन्यास के अंत तक आदर्श का दामन थाम लेते हैं। लेकिन गोदान का कारुणिक अंत इस बात का गवाह है कि तब तक प्रेमचंद का आदर्शवाद से मोहभंग हो चुका था। यह उनकी आखिरी दौर की कहानियों में भी देखा जा सकता है।

'गोदान' प्रेमचंद का हिंदी उपन्यास है जिसमें उनकी कला अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँची है। गोदान में भारतीय किसान का संपूर्ण जीवन, उसकी आकांक्षा और निराशा, उसकी धर्मभीरुताओं और भाग्य परायणता के साथ स्वार्थपरता और बैठकबाजी, उसकी बेबसी और निरीहता आदि का जीता जागता चित्र उपस्थित किया गया है। उसकी गर्दन जिस पैर के नीचे दबी है उसे सहलाता, क्लेश और वेदना को झुठलाता, मरजाद की झूठी भावना पर गर्व करता, कर्ज के अभिशाप में पिसता, तिल-तिल शूलों भरे पथ पर आगे बढ़ता, भारतीय समाज का मेरुदंड यह किसान कितना शिथिल और जर्जर हो चुका है, यह गोदान में प्रत्यक्ष देखने को मिलता है।

वास्तव में, गोदान 20वीं शताब्दी की तीसरी और चौथी दशाब्दियों के भारत का ऐसा सजीव चित्र है, जैसा हमें अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। यदि हमें तत्कालीन समय के भारतवर्ष को समझना है तो हमें निश्चित रूप से गोदान को पढना चाहिए।

गोदान में बहुत-सी बातें कही गई हैं। जान पड़ता है प्रेमचंद ने अपने संपूर्ण जीवन के व्यंग और विनोद, कसक और वेदना, विद्रोह और वैराग्य, अनुभव और आदर्श सभी को इसी एक उपन्यास में भर देना चाहा है। कुछ आलाचकों को इसी कारण उसमें अस्त-व्यस्तता मिलती है। उसका कथानक शिथिल, अनियंत्रित और स्थान-स्थान पर अति नाटकीय जान पड़ता है। ऊपर से देखने पर है भी ऐसा ही, परंतु सूक्ष्म रूप से देखने पर गोदान में लेखक का अदभूत उपन्यास-कौशल दिखाई पड़ेगा क्योंकि उन्होंने जितनी बातें कहीं हैं, वे सभी समुचित उठान में कहीं गई है।

गोदान औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत किसान का महाजनी व्यवस्था में चलने वाले निरंतर शोषण तथा उससे उत्पन्न संत्रास की कथा है। गोदान का नायक 'होरी' एक किसान है जो वस्तुतः यहां किसान वर्ग के प्रतिनिधि के तौर पर मौजूद है। आजीवन कठिन संघर्ष के बावजूद उसकी एक गाय की आकांक्षा पूर्ण नहीं हो पाती। वस्तुत: गोदान भारतीय कृषक जीवन के संत्रासमय संघर्ष की कहानी है।

नगरों की कोलाहलमय चकाचौंध ने गाँवों की विभूति को कैसे ढँक लिया है ? जमींदार, मिल मालिक, पत्र-

संपादक, अध्यापक, पेशेवर वकील और डाक्टर, राजनीतिक नेता और राजकर्मचारी जोंक बने हुए कैसे गाँव के इस निरीह किसान का शोषण कर रहे हैं और कैसे गाँव के ही महाजन और पुरोहित उनकी सहायता कर रहे हैं ? गोदान में ये सभी तत्व दर्पण के समान प्रत्यक्ष हो गए हैं।

प्रेमचंद ने एक स्थान पर लिखा है- ***'उपन्यास में आपकी कलम में जितनी शक्ति हो अपना जोर दिखाइए, राजनीति पर तर्क कीजिए, किसी महफिल के वर्णन में 10-20 पृष्ठ लिख डालिए किंतु भाषा सरस होनी चाहिए, कोई दूषण नहीं।'***

प्रेमचंद ने गोदान में अपनी कलम का पूरा जोर दिखाया है। सभी बातें कहने के लिए उपयुक्त प्रसंग, कल्पना, समुचित तर्कजाल और सही मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, प्रवाहशील, चुस्त और दुरुस्त भाषा और वणर्न शैली मैं उपस्थित कर देना प्रेमचंद का अपना विशेष कौशल है और इस दृष्टि से उनकी तुलना में शायद ही किसी उपन्यास लेखक को रखा जा सकता है।

## प्रेमचंद और हिन्दी उपन्यास

प्रेमचंद उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र-मात्र समझते हैं। वे लिखते हैं-"मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल उद्देश्य है। चरित्र-संबंधी समानता और विभिन्नता, अभिन्नत्व में भिन्नत्व और विभिन्नत्व में अभिन्नत्व दिखाना ही उपन्यास का मुख्य कर्तव्य है। लेकिन इस चरित्र-चित्रण के साथ एक प्रश्न उठता है कि क्या उपन्यास सकार चरित्र का अध्ययन करके उन्हें यथातथ्य रख दे, उसमें अपनी तरफ से काट-छांट, कमी-बेशी कुछ न करे या किसी उद्देश्य की पूर्ति करने के लिए चरित्र में कुछ परिवर्तन भी स्वीकार करे?"

प्रेमचंद के इस उठाए हुए प्रश्न के पीछे आदर्श और यथार्थ की समस्या है। इस समस्या का विश्लेषण करके प्रेमचंद इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि उपन्यास उच्चकोटि के वही समझे जाते हैं जिसमें यथार्थ और आदर्श का समावेश हो गया हो। इसे ही प्रेमचंद ने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की संज्ञा दी है।

प्रेमचंद स्वभावतः आदर्शवादी हैं। जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे चरित्र में परिवर्तन करना चाहते हैं, वह आदर्शवादिता है और वे यह मानकर चलते हैं कि आदर्श को सजीव बनाने के लिए ही यथार्थ का उपयोग होना चाहिए। आदर्श और यथार्थ के बीच सही समन्वय के अभाव में होने वाले खतरों को प्रेमचंद पहले ही बता देते हैं। शुद्ध यथार्थवाद वे कभी नहीं चाहते। वे ऐसा आदर्शवाद भी नहीं चाहते कि जहां चरित्र सिद्धांतों की मूर्तिमात्र हों और जिनमें जीवन न हो। वे और स्पष्ट करते हुए कहते हैं- ***"चरित्र को उत्कृष्ट और आदर्श बनाने के लिए यह जरूरी नहीं कि वह निर्दोष हो-महान से महान पुरुषों में में भी कछ न कछ कमजोरियां होती हैं, चरित्र को सजीव बनाने के लिए कुछ उसकी कमजोरियों का दिग्दर्शन कराने से हानि नहीं है।"*** यही कमजोरियां उस चरित्र को मनुष्य बना देती हैं। चरित्रों में आदर्श और यथार्थ के मेल के सिवा प्रेमचंद चरित्र-चित्रण के लिए एक और शर्त रखते है-साहित्य सत हो, इस मनोरथ को सिद्ध करने के लिए जरूरत है कि उसके चरित्र (पॉजिटिव) हों, जो प्रलोभनों के आगे सिर न झुकाएं, बल्कि उनको परास्त करें, जो वासनाओं के पंजे में न फंसे बल्कि उनका दमन करें, जो किसी विजयी सेनापति की भांति शत्रुओं का संहार करके विजयनाद करते हुए निकले।

चरित्रों के चित्रण के लिए आदर्श और यथार्थ दोनों की जरूरत है, यहां तक तो बात ठीक है, लेकिन इसके आगे यह शर्त लगा देना कि चरित्र पॉजिटिव हो विरोधात्मक कथन जान पड़ता है। प्रेमचंद का आग्रह आदर्श और पॉजिटिव पर जितना है, उतना जीवन में प्रायः कहीं मिलता नहीं, इसलिए प्रेमचंद के पात्र यथार्थ होते हुए भी अपनी सामर्थ्य से परे आदर्शवादिता दिखाने के कारण या तो पर्याप्त विश्वसनीयता जाग्रत नहीं करते, या कम-से-कम प्रभावित तो नहीं करते, भले ही प्रेमचंद का आदर्शवादी मन यह कहे कि ऐसे ही चरित्र का हमारे ऊपर अधिक प्रभाव पड़ता है।

उपन्यास मानव-चरित्र का चित्र-मात्र हो, लेकिन बाल्टर बीसेंट के साथ प्रेमचंद कहना चाहते हैं कि ***"उपन्यास के विषय का विस्तार मानव-चरित्र से किसी कदर कम नहीं। उसका संबंध अपने चरित्र के कर्म और विचार, उनका देवत्व और पशुत्व, उनके उत्कर्ष और अपकर्ष से है। मनोभावों के विभिन्न रूप और भिन्न-भिन्न दशाओं में उनका मुख्य विकास उपन्यास के मुख्य विषय हैं।"***

यहाँ यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिए कि मनोभावों के दो पक्ष होते है- ऐकान्तिक या व्यक्तिगत और समाज-सापेक्ष। उपन्यासकार अपनी रुचि के अनुसार अपने उपन्यासों को व्यक्तित्व-विश्लेषक या सामाजिक बनाता है।

सामाजिक उपन्यास में देश-काल में आबद्ध समाज के स्वरूप को उपन्यास में उतारा जाता है। सामाजिक समस्याओं को उसमें उठाया जाता है। सुविधा के लिए हम एक को मनावैज्ञानिक और दूसरे को सामाजिक कलाकार कह सकते हैं। शरतचंद्र मनावैज्ञानिक कलाकार हैं, प्रेमचंद सामाजिक।

यद्यपि प्रेमचंद ने उपन्यास की परिभाषा देते हुए उसे मानव-चरित्र का चित्र माना है, लेकिन जान पड़ता है कि उपन्यासों के रचयिता और आलोचक होने के नाते वे इस परिभाषा से सहमत है कि उपन्यास उपन्यासकार के आस-पास के जीवन का प्रतिफलन है और यह प्रतिफलन उपन्यासकार मानव-चरित्र के चित्रण द्वारा साधता है। स्वयं प्रेमचंद के उपन्यास ही साक्षी हैं कि उनकी रचना केवल चरित्र-चित्रण के उद्देश्य से नहीं हुई, उपन्यासकार ने अपने चारों ओर के जीवन को ही किसी-न-किसी रूप में अपने उपन्यासों में प्रस्तुत किया है।

उपन्यासकार के चारों ओर से तात्पर्य केवल उसकी भौतिक सीमाओं के आधार पर नहीं है, किन्तु उसके मनोजगत से संबद्ध सामग्री से लेना चाहिए। प्रेमचंद ने दो-एक स्थलों पर संकेत किया है कि उन्हें अपने पात्र की प्रेरणा अमुक माध्यम से मिली है। एक स्थान पर वे कहते हैं- ***"रंगभूमि का बीजांकर हमें एक अन्धे भिखारी से मिला, जो गांव में रहता था।"*** या, ***मैने सूफिया का चरित्र मिसेज एनी बीसेंट से लिया है, यह सच है।"*** संभव है और भी चरित्रों की प्रेरणा उन्हें यहां-वहां से मिली हो। लेकिन यह नहीं माना जा सकता कि केवल पात्रों की प्रेरणा से उनका चरित्र-चित्रण करने के लिए प्रेमचंद ने अपने उपन्यास लिखे हैं।

उनके उपन्यास युग-जीवन को, उसकी समस्याओं और सपनों को चित्रित करते हैं। यह ठीक है कि युग-जीवन का एक प्रमुख पात्र वे बड़ी लगन से संवारते हैं, लेकिन न तो केवल पात्र के लिए उन्होंने उपन्यास लिखे हैं और न उन जैसा समर्थ उपन्यासकार लिखता है।

उपन्यासकार का प्रधान गुण उसकी सृजन-शक्ति है। इस सृजन-शक्ति को प्रेमचंद कल्पना-शक्ति की संज्ञा भी देते हैं। वे कहते हैं-"अगर उपन्यासकार में यह शक्ति मौजूद है तो वह ऐसे कितने ही दृश्यों, दशाओं और मनोभावों का चित्रण कर सकता है जिसका प्रत्यक्ष अनुभव नहीं है अगर उस शक्ति की कमी है, तो उसकी रचना में सरसता नहीं आ सकती। ऐसे कितने ही लेखक हैं जिनमें मानव-चरित्र के रहस्यों का बहुत मनोरंजक, सूक्ष्म और प्रभाव डालने वाली शैली में बयान करने की शक्ति मौजूद है, लेकिन कल्पना की कमी के कारण वे अपने चरित्रों में जीवन का संचार नहीं कर सकते।"

कल्पना के साथ-साथ उपन्यास की सफलता के लिए प्रभावोत्पादक और सजीव रचना-शैली चाहिए और गहरे भावों को स्पर्श करने का मसाला चाहिए। गहरे भावों के बिना, जीवन के भीतर गहरी पैठ के बिना उपन्यासकार मनोरंजन भले ही कर ले, मर्मस्पर्श नहीं कर सकता और बिना सही शैली के अच्छी से अच्छी बात बेअसर रह जाती है। प्रेमचंद उपन्यास में वार्तालाप अधिक चाहते हैं, लेखक की कलम से लिखा गया कम। आगे वे कहते हैं- ***"वार्तालाप केवल रस्मी नहीं होना चाहिए। प्रत्येक वाक्य को, जो किसी चरित्र के मुंह से निकले, उसके मनोभावों और चरित्र पर कुछ न कुछ प्रकाश डालना चाहिए। बातचीत का स्वाभाविक, परिस्थितियों के अनुकूल, सरल और सूक्ष्म होना जरूरी है। हमारे उपन्यासों में अक्सर बातचीत भी उसी शैली में कराई जाती है, मानो लेखक खुद लिख रहा हो।"***

यहां प्रेमचंद उपन्यास को भी नाटक की तरह ऑब्जेक्टिव देखना चाहते हैं, जिसमें कलाकार नेपथ्य में रहकर 'प्रॉम्प्ट' भले करता रहे, चाहे तो किसी पात्र के रूप में सामने आ जाए, लेकिन अलग खड़े होकर व्याख्याकार की हैसियत में आ जाए, यह उन्हें गवारा नहीं है और वे जो कहते हैं कि उपन्यास कथा और नाटक के बीच की वस्तु है, वह शायद इसी प्रसंग में। कथा कहने में कथाकार सामने रहता है। नाटक में कथाकार नेपथ्य में चला जाता है। उपन्यास में उसकी स्थिति कहीं बीच की होती है। कुछ वह खुद कहता है लेकिन बहुत कुछ उसके पात्र कह लेते हैं।

उपन्यास के आदर्श के संबंध में प्रेमचंद ने लिखा है- ***"जिस उपन्यास को समाप्त करने के बाद पाठक अपने अंदर उत्कर्ष का अनुभव करे, उसके सद्भाव जाग उठें, वही सफल उपन्यास है और ऐसे उपन्यास की रचना भी सभी उपन्यासकार नहीं कर सकते। जिसके भाव गहरे हैं, प्रखर हैं, जो जीवन में बद्दू बनकर नहीं बल्कि सवार बनकर चलता है, जो उद्योग करता है और विफल होता है, उठने की कोशिश करता है और गिरता है, जो वास्तविक जीवन की गहराइयों में डूबा है, जिसने जिन्दगी के ऊँच-नीच देखे हैं, सम्पत्ति और***

***विपत्ति का सामना किया है, जिसकी जिन्दगी मखमली गद्दों पर ही नहीं गुजरी, वही लेखक ऐसे उपन्यास रच सकता है, जिनमें प्रकाश, जीवन और आनंद प्रदान की सामर्थ्य होगी।"***

इस प्रकार प्रेमचंद ने अपने साहित्याभिव्यक्ति के स्वरूप पर विस्तार से सोचा है और अपने आपके ऊपर अनेक कैद लगा रखी हैं। यद्यपि वे कहते हैं कि मैं आजाद रौ आदमी हूँ, मसलेहों का गुलाम नहीं, लेकिन यह सही है कि साहित्य संबंधी कुछ पूर्वनिर्मित धारणाएं एक अर्से तक उन्हें पकड़े रही हैं।

## 'गोदान' का मूल कथ्य / प्रतिपाद्य

प्रेमचंद कृत 'गोदान' हिन्दी साहित्य की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। यह आज भी हिन्दी आलोचकों के लिए एक चुनौती है। आलोचकों का एक वर्ग यह मानता है कि 'गोदान' का मूल प्रतिपाद्य ग्रामीण जीवन एवं कृषि-संस्कृति है और इसमें आए नागरिक जीवन की सार्थकता ग्रामीण परिस्थिति की विषमता के प्रभाव को तीव्र करने मात्र तक सीमित है, जबकि दूसरे वर्ग की यह मान्यता है कि वस्तुतः 'गोदान' में उपन्यासकार का लक्ष्य सम्पूर्ण भारतीय जन-जीवन का मार्मिक चित्रण रहा है। अतः गोदान की असम्बद्ध सी दीख पड़ने वाली ग्रामीण और शहरी दोनों कहानियों के बीच से भारतीय जीवन की विशाल धारा बहती चली आती है।

वस्तुतः 'गोदान' के मूल स्वर को आलोचकों ने ठीक से पहचाना ही नहीं। वास्तविकता यह है कि इस असामान्य कृति द्वारा प्रेमचंद भारतीय जन-जीवन का कोई स्थिर चित्र प्रस्तुत नहीं करना चाहते थे, भले ही वह ग्राम-जीवन का विशद् हृदयस्पर्शी चित्र हो अथवा भारतीय समाज का महाकाव्यात्मक विवरण ही क्यों न हो। उनका कलाकार पक्ष तत्कालीन समाज की गत्यात्मक शक्तियों के दबाब को अनुभव कर चुका था और अपनी लम्बी साहित्यिक साधना के फलस्वरूप वे ऐतिहासिक विकासशील प्रवृतियों के सन्दर्भ में भारतीय समाज के एक व्यापक सत्य को 'गोदान' में उद्घाटित करना चाहते थे।

'गोदान' का प्रतिपाद्य युग के एक महान सत्य का उद्घाटन है। वह सामंती प्रथा के टूटने की कहानी है जिसे महान उपन्यासकार ने भारतीय जन-समाज की सभी आन्तरिक विषमताओं एवं सामाजिक अन्तर्विरोध के सन्दर्भ में चित्रित करने का सराहनीय प्रयास किया है। इसमें केवल ग्रामीण जीवन का विशद् एवं मार्मिक चित्रण नहीं, वरन् उन सामाजिक परिवर्तनकारी शक्तियों के संदर्भ में सम्पूर्ण भारतीय जीवन की अभिव्यक्ति का प्रयास है जो भारतीय समाज को उस समय उद्वेलित कर रही थी।

'गोदान' का अंतनिर्हित भाव सामंती प्रथा के गर्भ को फाड़कर निकलने वाली समाजवादी संस्कृति के जन्म की कहानी का स्पष्ट संकेत देता प्रतीत होता है। इसे बड़ी ही खूबी के साथ उपन्यासकार ने होरी और गोबर के चारित्रिक द्वन्द्व एवं स्वभावगत अन्तर्विरोध के माध्यम से चित्रित किया है।

महान कलाकृति में चरित्र का टाइप और व्यक्ति रूप इस तरह आपस में घुल-मिल जाता है कि उसे अलग करना असंभव होता है। 'गोदान' भी साहित्यिक वैभव का अन्यतम रूप है। उसमें भी व्यक्तित्व का सामाजिक तत्व एवं उसका निजी अंश आपस में इस प्रकार मिल गए हैं कि उनके व्यावहारिक रेशों को अलग करना असंभव है।

होरी तो सामंती संस्कृति का सघनतम जीवित रूप है। वह धरती से इसलिए चिपटा रहता है कि वह सामंती मर्यादा का प्रश्न है। हर तरह के शोषण द्वारा पिसकर भी वह सामंती प्रथा का इसलिए मूक भाव से वहन करता जाता है, क्योंकि सामंती संस्कृति के अनुरूप वह नियति और कर्मफल में पूर्ण आस्था रखता है। वह यह मानता है कि हमारा जन्म इसीलिए हुआ है कि अपना रक्त बहावें और बड़ों का घर भरें। वह कमर्फल पर आधारित जाति-प्रथा का उल्लंघन नहीं कर पाता और अन्य कई प्रकार की बेईमानी करने के बावजूद ब्राह्मण का रुपया दबा लेने और उसका अनष्टि करने में भारी पाप समझता है।

सामंती संस्कृति की प्रमुख कड़ी है सम्मिलित कुटुम्ब के प्रति आस्था और बिरादरी में रहने का मोह। होरी इस मोह को तोड नहीं पाता। स्वाभाविक स्नेहवश जब वह अपने पुत्र की गर्भवती प्रेमिका झुनिया को अपने कुटुम्ब में शरण दे देता है तब अन्तर्जातीय विवाह को लेकर पंचायत उस पर सौ रूपये नकद और तीस मन अनाज देने के दण्ड का निर्णय करती है।

बिरादरी में रहने के इस मोह के कारण ही अपनी तमाम मुसीबतों एवं गरीबी के भयंकर परिणाम को एक ओर रखकर वह दण्ड को स्वीकार कर लेता है क्योंकि बिरादरी उसके जीवन में वृक्ष की भांति जड़ जमाये हुए थीं और उसकी नसें उसके रोम-रोम में बिधी थीं । बिरादरी से

निकलकर उसका जीवन विश्रृंखल हो जायेगा, तार-तार हो जायेगा। इसमें सन्देह नहीं कि होरी का चरित्र सामंती संस्कृति के ताने-बाने से बना गया है और बेलारी गांव की यथार्थ स्थिति के संदर्भ में उसका इस प्रकार विकास दिखलाया गया है कि जीवन्त व्यक्ति के रूप में वह टाइप बन गया है।

गोबर का व्यक्तित्व ठीक इसके विरोध में है। सामंती संस्कृति के जिन आधारभूत मूल्यों को होरी अपनाता है, उन सभी मूल्यों के प्रति न केवल वह असंतोष व्यक्त करता है वरन् उसके प्रति वह सक्रिय विरोध भी प्रकट करता है। वह जमीन का मोह छोड़कर शहरी मिल की मजदूरी करने में मर्यादा का कोई स्खलन नहीं समझता। वह न तो पुनर्जन्म में विश्वास रखता है और न कर्मफलवाद को ही स्वीकार करता है। उसके अनुसार पुनर्जन्मवाद एवं कर्मफल का सिद्धान्त तो केवल मन को समझाने की बातें हैं। भगवान् सबको बराबर बनाते है। यहाँ जिसके हाथ में लाठी है, वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।

गोबर परम्परा से चले आते धार्मिक अनुष्ठानों एवं पूजा-पाठ को स्वीकार नहीं कर पाता क्योंकि वे भी उसके लिए शोषण-चक्र के आधार पर ही टिके हैं। किसके बल पर यह भजन-भाव और दान-धर्म होता है? इस प्रश्न का स्पष्ट उत्तर है- किसानों के बल पर और मजदूरों के बल पर। यह पाप का धान पचे कैसे? इसीलिए दान-धर्म करना पड़ता है। भगवान् का भजन इसीलिए होता है। भूखे नंगे रहकर भगवान का भजन करें तो हम भी देखें।

झुनिया से अन्तर्जातीय विवाह करके गोबर स्वच्छंद प्रेम में अपनी आस्था ही नहीं प्रकट करता है, अपितु सीधे रुढ़िगत नैतिक मूल्यों पर प्रहार करता है। वह सम्मिलित कुटुम्ब की प्रथा पर न केवल अविश्वास रखता है वरन् ठीक होरी के चरित्र के प्रतिकूल बिरादरी की भी कोई चिन्ता नहीं करता। वह पैसे के मूल्य को अच्छी तरह पहचान गया था, अतः स्पष्ट स्वरों में अपनी माँ का प्रतिवाद करते हुए कहता है- रूपये हों तो न हुक्का पानी का काम है, न जात बिरादरी का। दुनिया पैसे की है, हुक्का पानी कोई नहीं पूछता।'

अगर होरी सामंती-संस्कृति का प्रतिनिधि पात्र है तो उसका पुत्र गोबर पूंजीवाद की उभरती शक्ति से उद्भुत उस मजदूर समुदाय का प्रतिनिधित्व करता है जो न केवल सामंती संस्कृति के विरोध में खड़ा अपनी शक्ति का परिचय देता है वरन् अपने अंतर में छिपे उन समाजवादी संभावनाओं का भी संकेत देता है जिसे हम इतिहास के प्रगतिशील तत्वों का दिशा-संकेत कह सकते हैं। 'गोदान' के रचयिता ने अपने युग के इस महान सत्य होरी की सामंतवादी आस्था के टूटकर गोबर की संभावित समाजवादी मान्यताओं में परिणति को ही अपना प्रतिपाद्य विषय बनाया है।

## नागरिकः शहरी जीवन की सार्थकता

प्रायः सभी आलोचकों ने यह माना है कि 'गोदान' में अगर गाँव के चित्र अधिकाधिक रूप से आए हैं तो शहरी जौवन के चित्र मात्र प्रासंगिक हैं। कुछ समीक्षक तो उसकी कोई भी सार्थकता नहीं ढूंढ पाते क्योंकि इस उपन्यास का वृहत् शरीर जिस देहाती जीवन के मेरुदण्ड पर खड़ा है उसकी प्रचुरता को देखते हुए अन्य प्रसंग क्षेपक-से लगते हैं।

आलोचकों का दूसरा समुदाय जो नागरिक जीवन के चित्रण में शिल्प का थोड़ा-बहुत औचित्य देखता है, यह मानता है कि 'गोदान' के द्वारा प्रेमचंद्र भारतीय जीवन को उसकी समग्रता में चित्रित करना चाहते थे और उसके लिए वे प्रचलित स्थापत्य शैलियों के माध्यम से प्रयत्न कर भी चुके थे- जैसे प्रेमाश्रम, रंगभूमि आदि में किन्तु 'गोदान' में इन पूर्व प्रारूपों की अपूर्णता को देखकर मानों कई बार प्रयोग करने के बाद वह उसे पा लेते हैं जिसके लिए वे भटक रहे थे।

सामंती प्रणाली का आधार ग्राम-समाज है तो पूंजीवादी सभ्यता का केन्द्र शहर है। किसान को टूटकर मजदूर बनना है तो उसे किसी औद्योगिक समाज में ही जाना होगा और अगर उस समय समाज का प्रतिनिधित्व करने वाला नागरिक समाज चित्रित न होता, तो अपनी आस्था को कर्मभूमि में स्थापित करने का गोबर को अवसर ही कहाँ मिलता?

'गोदान' में ग्रामीण-कथा और शहरी कथा-खण्डों को जोड़ने वाली घटनाओं के केन्द्र में ज्यादा स्पष्ट रूप से दो ही पात्र आते हैं- गोबर और जमींदार रायसाहब। जहाँ तक रायसाहब का प्रश्न है उनका ग्रामकथा से अभिन्न सम्बन्ध तो है ही, नागरिक समाज भी उनके व्यक्तित्व से पूरी तरह जुड़ा हुआ है। वे एक ओर सामंतवादी प्रथा का प्रतिनिधित्व करते हैं और उस समय वे शोषक के रूप में आते हैं तो दूसरी ओर वे पूंजीवादी प्रणाली के चक्र के शिकार हैं अर्थात् शोषित भी हैं। उनकी सामंती प्रथा पूर्ण रूप से खोलती हो उठी है जिसे रायसाहब आडम्बर और ऊपरी आवरण से छिपाना

चाहते हैं, पर मूलतः उनकी भी स्थिति वैसी ही है जैसी उनके अन्य किसानों की। होरी की ही भॉति वे भी कर्ज में आकंठ डूबे हुए हैं।

रायसाहब भी वैसे ही गिड़गिड़ाते और हाथ पसारते हैं। जैसे होरी दाताहीन, झिंगुरी सिंह और दुलारी सहआइन के सामने गिड़गिड़ाता है। अन्तर है तो बस इतना कि होरी के ये शोषक छोटे स्तर पर शोषण करते हैं और रायसाहब का शोषण करने वाले खन्ना जैसे कुछ बड़े पूंजीपति हैं।

होरी और रायसाहब वस्तुतः एक ही व्यवस्था के दो छोर पर स्थित हैं, पर जब इस व्यवस्था के मूल पर ही आघात होगा, तो निश्चय ही दोनों नीचे गिरेंगे। अतः जिन झूठी मान-मर्यादाओं एवं खोखली सामाजिक रुढ़ियों से होरी का जीवन ग्रस्त है उससे किसी प्रकार रायसाहब भी मुक्त नहीं, अन्तर है तो केवल वातावरण का, बाहरी आवरण का, अभिव्यक्ति एवं आचरण के माध्यम का। यह ठीक है कि होरी की तरह उपन्यासकार ने उनकी मृत्यु को अनिवार्य नहीं समझा, पर इसमें सन्देह नहीं कि उनका अन्त अत्यंत कुशलता के साथ उपन्यासकार ने अंकित किया है। वे जीवन के सभी आयामों पर पराजित लगते हैं, उनके जीवन का मेरुदण्ड ही टूट गया है, अतः वे विवश और जीवन से पूर्ण रूप से विरक्त लगते हैं। उनकी स्थिति वस्तुतः जीवित मृत्यु का ही बोध कराती है।

स्पष्ट है कि गोबर, रायसाहब और खन्ना के चरित्र और उनके व्यक्तितत्व की आवश्यक परिणति ने शहरी जीवन के चित्रण को अनिवार्य बना दिया। पर प्रश्न उठाया जा सकता है कि इस मूल कथा के साथ मालती-मेहता-खन्ना-गोविन्दी की उपकथा को जोड़ने में उपन्यासकार का क्या लक्ष्य रहा होगा? क्या यह अंश सचमुच शहरी पाठकों की अभिरुचि को ध्यान में रखकर लिखा गया है?

प्रेमचंद तो अंत तक साहित्य को सोद्देश्य बनाने के पक्ष में रहे। कोरे मनोरंजन और रूचि-वृत्ति के लिए किसी अंश को गोदान जैसे उपन्यास में स्थान देने की बात उनकी कला और साहित्य-साधना के सर्वथा प्रतिकूल है। लगता है, मालती-मेहता, खन्ना-गोविंदी के चरित्र के माध्यम से वह प्राचीन और नई संस्कृति के मान मूल्यों को उद्घटित करना चाहते थे।

सामंती प्रथा का विघटन और पूंजीवादी प्रणाली के प्रभुत्व का प्रभाव केवल आर्थिक व्यवस्था पर ही नहीं पड़ता। यह परिवर्तन तो समाज की सम्पूर्ण व्यवहार-प्रणाली पर ही अपना दबाव डालता है। बदली परिस्थिति नये मान-मूल्यों की मांग करती है और मेहता-मालती का प्रसंग इस संदर्भ का ही उदाहरण है। सामंतवाद से पूंजीवाद की यात्रा एक नये वर्ग-मध्यवर्ग को जन्म देती है जिसका आधार एवं सामाजिक सबंध पहले के मध्यवर्गीय समाज की स्थिति से पूर्णतया भिन्न होता है।

नये समाज में स्त्रियों का जीवन दूसरे स्तर पर अपनी सार्थकता ढूँढता है। वह प्रेम, विवाह और पारिवारिक मान्यताओं को दूसरे दृष्टिकोण से देखने लगती है। मालती के जीवन को वस्तुतः इस बदले मूल्यों के संदर्भ में ही देखना उचित होगा। उसका व्यवहार उन्मुक्त है पर उच्छृंखल नहीं, वह अपने पैरों पर खड़े रहने की सामर्थ्य रखती है और जीवन के साथ वह कोई गंभीर खिलवाड़ नहीं करती वह वैभव के बीच आमोद-प्रमोद ढूँढती है पर खन्ना के धन पर फिसलती नहीं, वह विवाह को प्रेम का आधार नहीं बनाती, पर प्रेम के आधार पर विवाह का भवन खड़ा करना चाहती है। वह परिवार के बीच अपनी सत्ता, अपने व्यक्तित्व को खो देने की मान्यता की स्वीकार नहीं करती, अपितु अपने व्यक्तित्व के प्रति पूर्ण सचेत रहती है। संक्षेप में कहें तो वह बाहर से तितली है, भीतर से मधुमक्खी।

यह बात दूसरी है कि उपन्यासकार नागरिक कथा को पूर्ण सहानुभूति के साथ अंकित नहीं कर पाया है और रह-रहकर उसकी आदर्शवादी मान्याताए नये मूल्यों के साथ टकरा जाती है। अपनी मान्यताओं के प्रति कठोर आग्रह रखने के कारण चरित्रों को ऐसे मोड़ दिया है कि घटना-प्रसंग कई स्थलों पर अविश्वसनीय हो उठता है। अविश्वसनीय होने का एक और कारण भी है। उपन्यासकार ने कुछ ही नये मूल्यों को अपनी दृष्टि में रखा, उसे वह व्यापकता न दे पाया जिसे देना अपेक्षित था। अतः वातावरण के अधूरे संदर्भ में नये मूल्यों को आदर्शवादी मोड़ देने के कारण असंगतियाँ स्वयमेव उद्भूत हो उठी हैं।

## गोदान: भारतीय किसानी-जीवन का महाकाव्य

प्रेमचंद कृत 'गोदान' भारतीय किसानी-जीवन के संघर्ष की महागाथा है। यह प्रेमचंद की सबसे महत्वपूर्ण कालजयी कृति तो है ही, हिन्दी उपन्यास और व्यापक अर्थ में भारतीय उपन्यास के इतिहास में भी इसका अद्वितीय स्थान है। यद्यपि इसमें प्रेमचंद ने भारतीय किसानी-जीवन की त्रासदपूर्ण परिस्थितियों को चित्रित्र करना चाहा है, किन्तु यह

तत्कालीन भारतीय समाज का एक लिखित दस्तावेज बन गया है।

गोदान कथावस्तु और शिल्प-संरचना, दोनों दृष्टिकोण से एक महान उपन्यास की श्रेणी में अपनी उपस्थिति दर्ज करता है तो इसलिए कि इसमें ग्रामीण जीवन की हर धड़कन एवं उसमें छिपे हुए अन्तर्विरोध तो मौजूद है ही, इसके साथ-साथ यह शहरी जीवन की जटिलताओं को भी उद्घाटित करता है। यही कारण है कि गोदान का अनुशीलन प्रायः एक महाकाव्य के रूप में किया जाता है।

गोदान की सबसे महत्वपूर्ण बात उसकी कथा-योजना है जो उसे एक विस्तृत फलक प्रदान करती है। इसमें दो समानान्तर कथाओं की योजना की गई है। ग्रामीण जीवन की कथा इसके कथावस्तु का मुख्य भाग है तो नगरीय जीवन की कथा मुख्य कथा को स्पष्ट करने के लिए रखा गया है। यहां संपूर्ण ग्रामीण जीवन जिन परंपरागत सामंती मूल्यों में बंधा है उनका समग्र चित्रण हुआ है।

कर्ज की समस्या, जाति-विरादरी का डर, सामाजिक मान-मरजाद, धार्मिक पाखण्ड आदि का जो शोषण चक्र है उससे होरी जैसे किसानों का बचना संभव नहीं है। यही वजह है कि इस ग्रामीण परिवेश में अपनी तमाम कोशिशों के बावजूद न तो होरी एक सामान्य जीवन जी पाता है और न ही मातादीन जैसे लोग सामाजिक मूल्यों को तोड़कर सिलिया को अपना सकते हैं।

यद्यपि नगरीय जीवन की कथा एक अवांतर कथा-सी लगती है किन्तु जिन सामंती मूल्यों के विघटन के पश्चात नई व्यवस्था का जन्म होने वाला है उन स्थितियों के परिप्रेक्ष्य में नगरीय कथा को ग्रामीण कथा से जोड़कर देखा जा सकता है। वस्तुतः तत्कालीन भारतीय समाज के ऐतिहासिक-सामाजिक आधार को समझने के लिए दोनों कथाओं को जोड़कर देखना अनिवार्य हो जाता है।

'गोदान' प्रेमचंद की एक यथार्थवादी रचना है। इसमें किसानी जीवन की समस्याओं, सामाजिक विसंगतियों, नारी की उपेक्षित स्थिति, रुढिगत पारिवारिक व्यवस्था, गांवों का विघटन आदि प्रसंगों का जो चित्रण किया गया है वह व्यापक युग जीवन के साथ जुड़कर आया है। वैसे यहां कई बार प्रेमचंद की दृष्टि सुधारवादी भी रही है। वस्तुतः मानवीय सरोकार रखने वाले प्रेमचंद हर परिस्थिति में मानवीय आस्था को बचाए रखना चाहते हैं। यहां होरी, धनिया, सिलिया, मेहता, मालती आदि सभी पात्रे में प्रेमचंद ने अपनी आस्था को उद्घाटित किया है। मानवीय नैतिकता के प्रति होरी की आस्था की पराकाष्ठा को उस प्रसंग में देखा जा सकता है जब वह गोबर से कहता है कि 'नीति हाथ से न छोड़ना चाहिए बेटा, अपनी-अपनी करनी अपने साथ है।'

प्रेमचंद ने गोदान में यद्यपि होरी की त्रासद कथा को रखा है किन्तु उसमें अन्य कई प्रासंगिक कथाओं को भी जोड़ दिया है। मसलन, सिलिया-मातादीन, मेहता-मालती, गोविंदी खन्ना आदि का प्रसंग। ये सारे प्रसंग न केवल मुख्य कथा को तीव्र बनाने में सहायक हैं बल्कि मानवीय संवेदना को भी उभारते हैं। यहां इन सभी घटनाओं को परिस्थितियों के अनुकूल ही रखा गया है जिससे कथा में मौजूद अन्तर्विरोध और खुलकर सामने आते हैं। प्रेमचंद ने भी विरोधाभासी परिस्थितियों को उभारने के लिए ही जमींदारी व्यवस्था की पृष्ठभूमि में होरी जैसे किसानों की गुलाम मानसिकता को रखा है।

इसी तरह प्रो. मेहता व मालती भी आमने-सामने हैं। इस दृष्टिकोण से सबसे खास प्रसंग तब आता है जब हीरा के आकस्मिक मिलन के साथ ही होरी की मृत्यु को सामने रखा दिया जाता है। इससे होरी की मृत्यु और मार्मिक एवं कारुणिक बन जाती है।

इस प्रकार, प्रेमचंद ने विभिन्न प्रसंगों द्वारा सामाजिक-धार्मिक अन्तर्विरोध व उनकी परिणतियों को सामने रखा है। यहां युगीन परिस्थितियों का चित्रण मानवीय चरित्र को उभारने के लिए एक अनिवार्य साधन के रूप में सामने आता है क्योंकि परिस्थितियों के सापेक्ष ही मानवीय जीवन को समझा जा सकता है। यहां गरीबी के सापेक्ष होरी के मार्मिक जीवन को देखा जा सकता है। जीवन भर संघर्ष करने वाला ईमानदार व कर्मठ होरी अंत में बड़ी दयनीय स्थिति में स्वयं को मृत्यु के हाथों में सौंप देता है। वह कहता है- ***"मेरा कहा सुना माफ करना धनिया, अब जाता हूं। गाय की लालसा मन में ही रह गई, अब तो यहां के रूपये क्रिया कर्म में जायेगें।"*** यहां आकर गोदान के ईमानदार व आस्थावान नायक होरी की मृत्यु पाठक को बेहद झकझोरती है।

## गोदानः किसानी जीवन की त्रासदी

त्रासदी यूरोपीय साहित्य की देन है। त्रासदी में नायक की मृत्यु अनिवार्यतः चित्रित होती है। टी. आर. हेन के अनुसार- ***"त्रासदी में नायक किसी न किसी हादसे का शिकार***

***होकर अपनी जान से हाथ धो बैठता है। नायक की मृत्यु से पाठक में करूणा का उद्रेक होता है।***"

अरस्तु के अनुसार- ***"त्रासदी के नायक को भद्र होना चाहिए। भद्रता उसकी महत्वपूर्ण चारित्रिक विशेषता होती है। इस भद्रता के कारण ही वह खल (दुष्ट) पात्र पर भी विश्वास कर लेता है और अंततः षड़यंत्र का शिकार हो जाता है।"***

हीगल के अनुसार- ***"त्रासदी में नायक की मृत्यु उसके किसी खास दुर्गुण का परिणाम नहीं होता बल्कि नायक की छोटी-सी भूल का परिणाम होता है।"*** इस लिहाज से यदि हम गोदान पर विचार करें तो गोदान स्वरूपतः त्रासदी नहीं है लेकिन प्रभावतः सदी है। जिस तरह त्रासदी (दुखांत) रचना पाठक को हिलाकर रख देती है और अपना मरणान्तक असर छोड़ती है, लगभग उसी तरह गोदान में होरी की मौत हमें स्तब्ध कर देती है।

जिस होरी के साथ गोदान में पाठक सहानुभूति बनाते हुए यात्रा करता रहता है उसे अंत में खोकर स्वयं वह कुछ खोने के एहसास से भर जाता है। चूंकि गोदान में होरी की हत्या नहीं होती, इस लिहाज से इसे तात्विक आधार पर त्रासदी नहीं कहा जा सकता लेकिन गहरी छान-बीन के बाद हम इस नतीजे पर पहुंचते हैं कि होरी की मौत, मौत नहीं है बल्कि एक 'स्लो प्वॉजनिंग' का केस है जिसके तहत महाजनों ने सूद की ठरकी मिला-पिलाकर होरी को मारा।

'गोदान' भारतीय किसानी जीवन का एक ऐतिहासिक दस्तावेज है जिसमें किसानों के शोषण, विवशता तथा उनकी व्यथा को साकार कर देने वाली परिस्थितियां मौजूद है। गोदान में प्रेमचंद ने भारतीय ग्रामीण जीवन की संपूर्ण विसंगतियों एवं विडम्बनाओं को उनके यथार्थ रूप में दर्ज किया है। भारतीय किसानों की दयनीय स्थिति और विषम परिस्थितियों से उसकी टकराहट के कारण उसके जीवन में उत्पन्न त्रासदी को कहीं भी देखा जा सकता है।

यह महज संयोग नहीं है कि गोदान के आरम्भ और अंत में स्वीकृति के अर्थ में मृत्यु का संकेत है। कथा के एकदम आरंभ में ही होरी-धनिया के बीच कठिन संघर्ष के एहसास के साथ-साथ हास्य -विनोद आदि सब आते हैं, पर प्रेमचंद ने लिखा है कि इस क्षणिक मुद्दता को यथार्थ की आंच में झुलसते देर नहीं लगती। होरी भी कहता है ***"साठा तक पहुँचने की नौबत न आने पायेगी धनिया इसके पहले ही चल देगें।"*** यह आने वाली कठोर मृत्यु का पूर्वाभास नहीं तो क्या हैं?

गोदान की ट्रेजडी की व्याख्या कराते हुए रामविलास शर्मा ने कहा है कि- ***'कथा ट्रेजडी है कि नहीं यह मृत्यु पर निर्भर नहीं है फिर गोदान के अंत में तो मृत्यु की प्रत्यक्ष उपस्थिति तो है ही।'*** त्रासदीपूर्ण रचनाओं की एक खास पहचान यह मानी जाती है कि उसमें कथा का नायक या नायिका सदा दुःखपूर्ण स्थितियों से संघर्ष करता है और उसी के साथ उसकी जीवन लीला समाप्त हो जाती है।

विद्वानों ने त्रासदी के मुख्यतः चार तत्वों की चर्चा की है- संत्रास, करुणा, ह्रास और रहस्य। यदि इस दृष्टिकोण से भी देखा जाए तो गोदान में ऐसी स्थितियां बिखरी पड़ी हैं।

गोदान की मूल समस्या शोषित और उत्पीड़ित किसानों के कर्ज की समस्या है। इस कथा में किसानों के ऐसे जीवन का चित्रण है जिसमें कर्ज से बनी सामाजिक-धार्मिक व्यवस्था में कथा नायक होरी का दब्बूपन, गाय पालने की उसकी लालसा व उसकी पूर्ति हेतु कर्ज के दल-दल में फंसना, समाज के मान-मर्याद के लिए बड़े-बड़े जोखिम उठाना, पंचायत का डाँड भरने के लिए कर्ज लेना आदि कुछ ऐसे प्रसंग हैं जो किसानी जीवन में संत्रास पैदा करते हैं किन्तु ऐसा नहीं है कि होरी को इस संत्रास की अनुभूति नहीं है बल्कि उसकी यह भावना आरंभ में तब जाहिर हो जाती है तब वह कहता है कि 'जब दूसरो के पांव के तले गर्दन दबी हो तो उन पाँवों को सहलाने में ही कुशलता है।' वस्तुतः होरी जिन रायसाहब से मिलते-जुलते रहने को अपने जीवन का परसाद मानता है वह परसाद भी उसे नहीं बचा पाता है।

किसानी जीवन की त्रासदी का एक बड़ा कारण उसका भाग्यवादी व समझौतावादी चरित्र भी है। चौतरफा शोषण झेलने के बावजूद भी होरी अपनी विवशता पर भगवान को दोषी ठहराता है और भाग्यवादी होकर शिथिल पड़ जाता है, इसी तरह गाय को जहर देकर मारा जाना, पंचों का डॉड भरना आदि को वह अपने भाग्य का दोष मानता है। वह किसी भी हाल में जाति-बिरादरी से बाहर नहीं होना चाहता और उसकी यही मजबूरी उसे समाज के समक्ष समर्पण करने को मजबूर करती है।

होरी जैसे किसानों की कारूणिक स्थिति से पाठक की सहानुभूति बहुत ही स्वाभाविक है, करूणा त्रासदीय सर्जनाओं का एक महत्वपूर्ण तत्व है। इस कथा के आरंभ से अंत तक जो होरी की दयनीय स्थिति है वह किसानी जीवन

की विडम्बनाओं की एक ऐसी तस्वीर है जिसे देखकर मर्माहत हुए बिना नहीं रहा जा सकता है। कारुणिक दशा की पराकाष्ठा तो तब हो जाती है जब होरी अपनी मान-मरजाद को बचाये रखने के लिए जहां पहली बेटी की शादी में कर्ज लेता है वही दूसरी बेटी को एक प्रौढ व्यक्ति के हाथों बेचने को मजबूर हो जाता है। और फिर जिस गाय पालने की साध वह आजीवन पूरा नहीं कर पाता, वही उसके मरते समय बीस आने का गोदान किया जाता है।

यह कैसी विडम्बना है कि जो व्यक्ति आजीवन गाय की लालसा पूरी नहीं कर सका उससे मरते समय गोदान की अपेक्षा की जाती है। गोदान के ये ऐसे दृश्य हैं जो पाठक के मन में घनीभूत वेदना को जन्म देते हैं। इसी प्रकार, कथा के सभी नारी पात्र धनिया, झुनिया, सिलिया व गोविन्दी आदि का जीवन भी कारुणिक स्थितियों से परिपूर्ण है।

कथानायक होरी की एक विडम्बना यह भी है कि वह तमाम अच्छाइयों के बावजूद सर्वत्र पराभूत होता है। वह तमाम उम्र संघर्ष करता है, सामाजिक-धार्मिक मूल्यों को स्वीकार करता है, नैतिकता का पालन करता है फिर भी वह अपनी छोटी-छोटी लालसाओं व जरूरतों के लिए दर-दर भटकता है। समाज व धर्म के ठेकेदार जिसमें धर्म, बिरादरी, सरकार, पंच आदि शामिल हैं उसकी जिन्दगी तबाह कर देते हैं। पांच बीधे जमीन का मालिक होकर भी उसका किसान बना रहना दुष्कर प्रतीत होता है और वह अंततः मजदूर बन जाता है। जीवन का अभाव होरी को भीतर से तोड़ देता है।

भारतीय गांवों का विषमतामूलक समाज भी उसकी दयनीयता का कारण है। गोदान का ऊँच-नीच, जाति-पाति, अमीर-गरीब, जमींदार-किसान एवं साहूकार-देनदार की जो भेदमूलक सामजिक व्यवस्था का चित्रण हुआ है वह वस्तुतः बेलारी गांव का नहीं बल्कि सम्पूर्ण भारतीय गांवों का है। होरी भी इस विषमता का शिकार बनता है। सभी तरह के व्यभिचार करने वाले दातादीन, मातादीन, झिंगुरी सिंह, नोखेराम आदि पंच बने बैठे हैं तो एक सीधा सरल किसान होरी इन पंचों का दंड भरता है।

गोदान की सबसे बड़ी त्रासदी यह भी है कि जिस शोषणवादी चक्र में होरी फंसा है आखिर उसका कारण क्या है? इसका पता नहीं लगता। आखिर एक गरीब व ईमानदार किसान किन कारणों से विडम्बनाओं का शिकार बन जाता है। यद्यपि कथा में इसका कोई प्रत्यक्ष कारण नहीं दिखाई पड़ता किन्तु इनके पीछे जो ऐतिहासिक सामाजिक अन्तर्विरोध है, उसे समझा जा सकता है। वस्तुतः जिस सामंती व्यवस्था का होरी शिकार है उसका मुख्य आधार ही शोषण व धार्मिक पाखण्ड है।

इस व्यवस्था का अस्तित्व तभी तक कायम है जब तक सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक विसंगतियां मौजूद हैं। होरी की मृत्यु के जरिए प्रकारान्तर से प्रेमचन्द ने इस व्यवस्था की मृत्यु का संकेत तो दिया है लेकिन भारतीय समाज में उसकी जड़ें इतनी गहरी है कि उसके लक्षण अभी भी देखे जा सकते हैं। यही वजह है कि आज भी होरी जैसे कर्तव्य परायण और मेहनतकश किसान आत्म हत्याएं करने को विवश हैं।

समग्रतः हम देखते हैं कि गोदान किसानी जीवन की विडम्बना और त्रासदी का एक ऐसा लिखित दस्तावेज है जिसके प्रत्येक पृष्ठ पर विवश किसानों के अंगूठे के निशान देखे जा सकते हैं। यहां त्रासदी केवल होरी के साथ नहीं है बल्कि एक समूचे कृषक समाज की मार्मिक त्रासदी है। विडंबना तो यह भी है कि शोषण के बावजूद किसान विद्रोह नहीं करता, मानों वह अपनी सीमाओं में कैद होकर इसको सहने के लिए अभिशप्त है।

## गोदान: राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास

प्रेमचन्द का 'गोदान' भारतीय कृषक जीवन का महाकाव्य है। इसमें युगीन समय और समाज का इतना विस्तृत और समग्र चित्रण हुआ है कि इसके आधार पर हम युगीन भारत की तस्वीर को देख सकते हैं। इसी संदर्भ में गोदान के राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास होने की बात कही जाती है, किन्तु इसे लेकर आलोचनाएं भी कम नहीं है। असल में, नए-नए मानदण्डों और बदलते परिप्रेक्ष्य में गोदान की रचनात्मकता को लेकर बहस होती रही है और तभी इसके राष्ट्रीय संदर्भ को लेकर सवाल खड़े किए जाते रहे हैं।

जहाँ तक 'गोदान' की राष्ट्रीयता या उसके राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास होने की बात है तो इसे लेकर एक बड़ी आपति आचार्य नंद दुलारे वाजपेयी को है। अपनी आलोचना में उन्होंने कहा है कि एक महत्वपूर्ण रचना होते हुए भी गोदान की अन्तर्वस्तु और उसमें अन्तर्निहित मूल्य ऐसे नहीं हैं कि उसे राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास कहा जाए। उनके आलेचना के केन्द्र में लियो टाल्सटॉय की विश्व प्रसिदध रचना 'वार एण्ड पीस' (War and Peace) है और 'गोदान' की तुलना उससे करते हुए उन्होंने अपनी आपतियों को जाहिर किया है।

उनका मानना है कि 'गोदान' में कथानक न केवल सीधा और सपाट है बल्कि अधूरा भी है। इसमें ग्रामीण जीवन का चित्रण है जो अपनी सामाजिक-आर्थिक ताने-बाने को बहुत स्पष्ट नहीं करता जबकि इसकी शहरी कथा शहर को केवल स्पर्श करके निकल जाती है। गोदान में न तो युगीन राष्ट्रीय संघर्ष का चित्र है, न तो नवजागरण का संदेश है और न ही कथा में मौजूद युगीन दुःख-दर्द के निवारण का कोई महान संकल्प है। यह रचना अपने युग की सर्वोच्च राष्ट्रीय चेतना की झलक देने में सक्षम नहीं है।

दूसरी बात, महाकाव्य में वीर रस की प्रधानता होती है, जबकि गोदान एक करुण रस-प्रधान रचना है। इसमें समाज का समग्र चित्रण नहीं है और इसमें पात्र की संख्या भी उतनी नहीं है जो युग जीवन को समग्रता प्रदान कर सके। अपनी आलोचना के अंत में वाजपेयी जी इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि वास्तव में प्रेमचन्द "सीमित देश और काल को लेकर वर्तमान ग्रामीण जीवन का दिग्दर्शन कराना चाहते हैं। इसमें महाकाव्यात्मक औदात्य का न तो वैसा उत्कर्ष है और न ही उतना गहनतम चित्रण। वस्तुतः गोदान राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास के रूप में उस तरह प्रामाणिक रचना नहीं हैं जिस तरह वार एड पीस।"

स्पष्ट है कि वाजपेयी जी गोदान को मुख्यतः 'वार एण्ड पीस' के परिप्रेक्ष्य में देखते हैं जो कहीं से भी उचित नहीं है ।। ऐसा इसलिए कि 'वार एण्ड पीस' गोदान से एक सर्वथा भिन्न प्रकार की रचना है जिसमें उपन्यासकार का मुख्य उद्देश्य एक खास तरीके से युगीन राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक संरचना को विस्तार देना है। यही वजह है कि उसमें अनेक घटनाओं और चरित्रों का समावेश हो गया है, जबकि इसके विपरीत गोदान में प्रेमचंद की दृष्टि मानो चिड़िया के आँख पर हो। इसमें उन्होने एक छोटे से गांव बेलारी की पूरी समस्याओं को रुपायित किया है जो न केवल उत्तर भारत बल्कि समस्त हिन्दुस्तान के किसी भी गांव का हो सकता है। इस अर्थ में बेलारी तत्कालीन भारत का एक प्रतिनिधि गांव जैसा दिखता है।

1936 के भारत में, जब उसकी 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या गांव में रहती है तो इतना निश्चित है कि होरी की समस्या वस्तुतः एक बेलारी गांव के किसान की समस्या न होकर भारतीय किसानों की समस्या है और यही वजह है कि गोदान को 'भारतीय किसानी जीवन की महागाथा' भी कह दिया जाता है। ग्रामीण समाज का शायद ही कोई ऐसा कोना हो जिस तरफ प्रेमचंद का ध्यान न गया हो।

वाजपेयी जी किसानी जीवन की उस त्रासदी को शायद नजरअंदाज कर जाते हैं जो समूचे भारत को अपनी परिधि में समेटे हुए है। होरी की सीधी-साधी कथा के जरिए प्रेमचंद किसानी जीवन की त्रासदी की घनीभूत वेदना को जिस तरह रुपायित करते हैं वह महाकाव्यात्मकता औदात्य से परिपूर्ण है।

गोदान का एक दूसरा पक्ष नागरिक कथा है जिसमें उच्च और निम्न दोनों वर्गों का चित्रण हुआ है। किन्तु यहाँ उल्लेखनीय है कि यह नगरीय जीवन गांवों से दूर होकर भी दूर नहीं। ग्रामीण समाज का सांमती स्वरूप और उसके विघटित होते मूल्य इस बात का संकेत करते हैं कि अब यह ढाँचा टूटने वाला है और इसकी जगह पूंजीवादी-महाजनी सभ्यता आने वाली है जिसके संकेत अब मिलने लगने लगे हैं। प्रेमचंद ने सामंती समाज के अन्तर्विरोधों से उत्पन्न जिन समस्याओं को उद्घाटित किया है वे बाहरी सतह पर तो बड़े सरल दिखते हैं किन्तु सामाजिक-आर्थिक बदलाव के दृष्टिकोण से उन्हें समझना बेहद जटिल है।

यह कहा जाता है कि गोदान में राष्ट्रीय संघर्ष का अभाव है और इसीलिए युगीन स्वतंत्रता संग्राम की अनुगूंज यहाँ नहीं सुनायी पड़ती। यह ठीक है कि यहाँ प्रेमचन्द ने प्रत्यक्षतः किसी घटना का उल्लेख नहीं किया है किन्तु कथा में जो होरी की दरिद्रता, अभाव, शोषण व कर्ज आदि के जो संघर्ष हैं वे क्या किसी बड़े संघर्ष से कम हैं?

तमाम विषम परिस्थितियों के बावजूद होरी अपने शक्तिशाली दुश्मनों जिनमें जमींदार, साहूकार, पटवारी, पुलिस और गाँव का पांच-बिरादरी आदि सब शामिल हैं, से वह हार नहीं मानता और ताउम्र उनसे संघर्ष करता है। क्या यह संघर्ष होरी जैसे साधारण नायक को महानायक नहीं बनाता?

होरी बेशक समझौतवादी है किन्तु कायर नहीं है। वह कुछ हद तक छल-प्रपंच, कपट, अन्याय और अनीति का सहारा भी लेता है किन्तु इसके बावजूद वह अपनौ नैतिकता और कर्मशीलता का साथ नहीं छोड़ता। इस दृष्टिकोण से वह गोदान के कई पढ़े लिखे और समझदार पात्रों से भी आगे है। यही वजह है कि कथा में होरी की मृत्यु जितना हमें कारुणिक नहीं बनाती उससे अधिक आंदोलित करती है। होरी मरता जरूर है किन्तु हारता नहीं।

प्रेमचन्द लिखते हैं कि- "कौन कहता है कि जीवन संग्राम में वह हारा है, यह उल्लास, यह गर्व, यह उमंग क्या

हार के लक्षण हैं? उसके टूटे-फटे अस्त्र विजय पताकाएं हैं, उसकी छाती फल उठी है, उसके मुख पर तेज आ गया है।" निःसंदेह होरी सामान्य में आसामान्य लक्षण वाला चरित्र है जिसका जीवन यदि पाठकों को मार्मिक बनाता है तो उसके जीवन का अंत उसे चिंतन करने के लिए विवश भी करता है।

मन्मथनाथ गुप्त ने 'गोदान' में राष्ट्रीय मूल्यों के तलाश के क्रम में लिखा है कि यह रचना तत्कालीन राष्ट्रीय संदर्भ को उठाने में उतनी ही सक्षम है। जितनी कोई अन्य राष्ट्रीय रचना। युगीन भूख, गरीबी, विभिन्न सामाजिक शोषण, स्त्री की उपेक्षा, सामंती मानसिकता आदि समस्याओं को गोदान में उठाकर उसके प्रति पाठक को विचार करने के लिए विवश कर दिया है। अतः इसे राष्ट्रीय संदर्भ में देखना बहुत स्वाभाविक है।

यद्यपि पात्र के दृष्टिकोण से यहाँ भीड़ नहीं है किन्तु जितने भी पात्र हैं वे सब वर्गीय चरित्र बन गए हैं। इसीलिए यहाँ लगभग सभी समस्याओं का सहज ही समावेश हो गया है। अतः गोदान सीधे-सीधे भले ही स्वतंत्रता संघर्ष की बात न करे किन्तु यहाँ होरी का संघर्ष दूसरे रूप में किसानों की मुक्ति का संघर्ष है जो वस्तुतः राष्ट्रीय संघर्ष ही है।

समग्रतः यह कहा जा सकता है कि एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में गोदान राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास होने की शर्तों को न केवल पूरा करता है बल्कि यह एक ऐसा महाकाव्य है जिसमें युगीन जीवन का समय चित्र, चितंन व संघर्ष मौजूद है। 'गोदान' का संदेश हमारे मन में निराशा का भाव नहीं भरता बल्कि परिस्थितियों से जूझने और टूटते जीवन को संबल प्रदान करने वाला है। चूंकि इसमें तत्कालीन जीवन की सभी धाराओं-उपधाराओं का प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष चित्रण किया गया है, अतः इसे राष्ट्रीय प्रतिनिधि उपन्यास कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए।

प्रेमचंद के 'गोदान' का समय वस्तुतः भारतीय इतिहास का संक्रमणकाल है जिसमें बदलावों के संकेत स्पष्टतया देखे जा सकते हैं। यहाँ यदि एक ओर परंपरागत सामंती व्यवस्था टूटती है तो वहीं उसकी जगह एक नयी व्यवस्था पूंजीवाद के रूप में जन्म ले रही है। जाहिर सी बात है कि यहाँ नए और पुराने मूल्यों का संघर्ष भी है जो होरी और गोबर के जरिए व्यक्त हुआ है। वस्तुतः यह संघर्ष जितना काल का नहीं है उतना मूल्य का है।

## गोदान में दो पीढ़ियों का संघर्ष

'गोदान' में यदि होरी पुरानी पीढ़ी का प्रतीक है तो वहीं गोबर नयी पीढ़ी का प्रतीक है। यहाँ पुरानी पीढ़ी स्पष्टतया सामंतवादी चेतना और मूल्यों से लैश है। यह पीढ़ी जिन मूल्यों और विचारों में आस्था रखती है उसे लेकर समूचे गोदान में बदलाव की एक छटपटाहट दिखाई देती है जबकि नयी पीढ़ी के रूप में गोबर जिन विचारों एवं मूल्यों को लेकर सामने आता है उसके रूप और आयाम भविष्य में अधिक दिखने वाले हैं।

गोदान में सामंती मूल्यों का प्रतीक होरी और उसके जैसे किसान यदि पीड़ित और शोषित हैं तो इसका कारण उनके अपने विचार और मूल्य भी हैं। सामंती समाज जिसे हम पुरानी पीढ़ी कहते हैं उसकी एक सबसे बड़ी कमजोरी उसका भाग्यवादी और यथास्थितिवादी होना है।

होरी की त्रासदी के मूल में एक बड़ा कारक उसका भाग्यवादी होना ही है। उसका यह दृढ विश्वास है कि गरीबी और जहालत उसके भाग्य में लिखी हुई है जबकि रायसाहब के भाग्य में अमीरी है। अपनी इस भोली आस्था की लिए हुए वह गोबर से कहता भी है. "छोटे-बड़े सब भगवान के घर से बनकर आते हैं, सम्पति बड़ी तपस्या से मिलती है। उन्होने पूर्व जन्म में जैसे कर्म किए उसका आनन्द भोग रहें हैं, हमने कुछ नहीं संचा तो क्या भोगेंगे।"

स्पष्ट है कि गोबर के जीवन मूल्यों में भाग्य, पुनर्जन्म आदि विचारों का कोई स्थान नहीं है। होरी की एक बड़ी समस्या धरम और मरजाद को लेकर भी है। वह जान चुका है कि इस खेती से कुछ भी होने वाला नहीं हैं किन्तु फिर भी उसे जमीन को लेकर जैसा लगाव है वह उसके जीवन को त्रासद बना देता है जबकि अंततः न तो जमीन बचती है और न ही होरी। सामंती समाज में यथास्थितिवाद का होना एक सच है जिसमें व्यक्ति अपनी दुर्दशा से परिचित होकर भी उसमें बदलाव का कोई प्रयास नहीं करता। यद्यपि 'पूस की रात' में हल्कू अपने आत्म-अलगावपन से विद्रोह कर बैठता है किन्तु यहाँ होरी में ऐसी बात नहीं दिखती।

दूसरी ओर, गोबर जो नए बदलते मूल्यों का वाहक है वह गांव की निराशा से ऊबकर विकल्पों की तलाश में पलायन कर जाता है। शहर जाकर गोबर किसी एक ही काम में नहीं टिकता बल्कि वह कई तरह के रोजगारों में अपनी किस्मत आजमाता है। सामंती समाज में जाति-बिरादरी का मोह कुछ अधिक ही होता है। दूसरे शब्दों

में हम कह सकते है कि सामंतवादी चेतना जाति और वर्ण-व्यवस्था की पोषण होती है। पुरानी पीढ़ी का होरी अपनी जाति-बिरादरी में रहने के लिए अपना पूरा जीवन ही दांव पर लगा देता है। पंचायत का डांड़ भरना और अपने शोषकों को सलाम करना उसकी बिरादरी में रहने का ही मोह है। जाति-बिरादरी का उसके मन में डर इतना अधिक है कि हुक्का-पानी बन्द होने की डर से अपना सब कुछ पंचायत को सौंप खुद सपरिवार भूखे रहने लगता है।

गोबर को इस जाति-बिरादरी से कोई लगाव नहीं है। लखनऊ से लौटने के बाद जब वह स्थिति से परिचित होता है तो उसका खून खौल उठता है। वह साफ कहता है कि ***"यहाँ के लोग निकाल देगें तो क्या कोई दूसरा गांव नहीं है? पैसा रहने पर सब पूछते हैं।"*** होरी अब भी जाने-अनजाने पंच को 'परमेश्वर' ही मानता है जबकि गोबर यह समझ चुका है कि इस पंच-परमेश्वर में से 'परमेश्वर' कब के जा चुके हैं और अब जो पंच बच गया है वह पंच नहीं 'परपंची' है। होली के अवसर पर पंचों का स्वांग करते हुए गोबर वस्तुतः अपनी भड़ास ही निकालता है जो प्रकारान्तर से उसकी पीढी का विद्रोह है।

जाति-व्यवस्था भी परंपरागत सांमती मूल्य ही है जो अपने में शोषण का एक हथियार भी है। होरी स्वयं एक पिछड़ी जाति (महतो) से आता है किन्तु फिर भी वह इस जाति-व्यवस्था में यकीन करता है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण तब देखने को मिलता है जब खलिहान में सिलिया और मातादीन के अवैध प्रेम-प्रसंग में निचली जाति के लोग दातादीन और मातादीन को ललकारते हैं। ऐसे में होरी दातादीन के पक्ष में ही खड़ा दिखाई पड़ता है, जबकि जीवन का सच यह कहता है कि जो शोषक और गरीबों को सताने वाला है उसके पक्ष में हम क्यों खड़े हो?

दरअसल, होरी सदियों से चले आ रहे सामंती मूल्यों में ही जी रहा था, जिसमें ऊंच-नीच का मुद्दा बहुत बड़ा होता है। दूसरी ओर गोबर ऐसे किसी भी मूल्य को नहीं स्वीकारता। उसके मन में कोई जातीय मोह नहीं है और तभी तो वह एक विजातीय लड़की झुनिया से प्रेम करता है और उस प्रेम को निभाता भी है। प्रेम को लेकर गोबर का यह नजरिया पुरानी पीढ़ी से एकदम अलग है। सच तो यह है कि सामंती समाज स्त्री-पुरुष संबंधों का उतना बुरा नहीं मानता लेकिन उसकी सामाजिक स्वीकृति को बर्दाश्त नहीं कर सकता।

सामंती समाज मिथ्या धरम और मरजाद को लेकर चलता है। होरी भी ऐसे मरजादों का शिकार है जहाँ वह मरजाद के लिए ही अपनी जमीन को दांतों से पकड़े हुए है। अपनी पहली बेटी सोना की शादी में वह मरजाद के निर्वाह के लिए ही कर्ज तक लेता है जबकि दूसरी बेटी रूपा की शादी करते हुए उसके इस मरजाद की बर्फ पिघलकर पानी हो जाती है और उसकी सारी कलई खुल जाती है। गोबर में ऐसा कुछ भी नहीं है, इसलिए वह सारे मरजादों से बाहर निकलकर अपने जीवन को अपनी शर्तों पर जीता है।

होरी में धर्मभीरुता भी है जो एक अन्य सामंती मूल्य है। वह बिना कारण ही धर्म से डरता है और इसीलिए वह महाजनों से लिए पैसे और उसके सूद को चुकाने को लेकर डरा हुआ है। गोबर जब दातादीन को अधिक सूद देने से मना करता है तो होरी के मन में हाहाकार मच जाता है। यहाँ प्रेमचन्द्र लिखते हैं कि ***"किसी दूसरे का पैसा रहता तो और बात थी लेकिन यह ब्राम्हण का पैसा है, हाड़ फ़ोड़कर निकलेगा।"*** होरी इसी डर से अपना सब कुछ गवांकर अपने ही खेतों में बटाईदार बन जाता है गोबर का ऐसे धर्म से कोई लेना-देना नहीं है। रायसाहब के बारे में बात करते हुए वह शुरू में ही कह देता है कि यह भक्ति ढकोसला है जो दूसरे के शोषण पर टिकी हुई है।

गांव में सिलिया और उसकी जाति का जो विद्रोह दिखाया गया है वह भी एक नए बदलाव और संघर्ष की ओर इशारा करता है। प्रेमचन्द्र यह साफ कर देना चाहते हैं कि सामंती व्यवस्था में जाति को केन्द्र में रहकर जो शोषण किया जा रहा है वह बहुत दिनों तक चलने वाला नहीं है। नयी पीढ़ी में एक असंतोष और आक्रोश है जो अब पुरानी पीढी और पुराने मूल्यों को बिल्कुल बर्दाश्त नहीं कर सकता। प्रेमचन्द्र ने यह भी इशारा किया है कि आने वाले नए समाज और नयी चेतना में एक बड़ी भूमिका मध्यवर्ग की होगी किन्तु उसका सक्रिय होना भी जरूरी है।

वैसे, जो नए मूल्य यहाँ दिखाई पड़ते हैं उसको लेकर प्रेमचंद के मन में थोड़ा संशय भी है। नयी पीढ़ी का गोबर सजग और सचेत तो है किन्तु वह अपनी पत्नी के साथ मारपीट करता है, शराब पीता है और कई अन्य बुराइयों में लिप्त है। यद्यपि प्रेमचंद अंत में गोबर का हृदय परिवर्तन करा देते हैं किन्तु यह नयी चेतना अभी दिशाहीन है और उसे एक उचित मार्गदर्शन की जरूरत है, यहाँ इसका भी संकेत मिलता है।

समग्रतः हम कह सकते हैं कि गोदान में दो पीढ़ियों का संघर्ष या टकराहट वस्तुतः दो अलग-अलग मूल्यों और व्यवस्थाओं का संघर्ष है। प्रेमचंद ने स्पष्ट कर दिया है कि होरी की मृत्यु यद्यपि पाठक को दुःखी करती है किन्तु दूसरे रूप में ऐसा भी लगता है कि मानो उसने अपनी मृत्यु का वरण किया हो।

होरी की मौत उस सामंती व्यवस्था और मूल्यों की मौत है जिसका मरना अब तय है। यहां गोबर का विद्रोह एवं उसके द्वारा विकल्पों की तलाश इस बात का संकेत है कि अब एक नयी व्यवस्था और मूल्य का जन्म भी अनिवार्य है। वैसे, यह नयी व्यवस्था कैसी होगी, इसे लेकर प्रेमचंद उलझन में हैं किन्तु इतना तय है कि आने वाली पीढ़ी अब बिना तर्क और विचार किए किसी को भी स्वीकार करने वाली नहीं है।

## 'गोदान': युगीन जीवन का प्रतिबिम्ब और भविष्य की प्रसव पीड़ा।

प्रेमचंद का 'गोदान' अपने युग का एक ऐतिहासिक दस्तावेज है जिसमें उनका समय और समाज तो उद्घाटित हुआ ही है, भविष्य में होने वाले बदलावों के स्पष्ट संकेत भी मौजूद हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि इस उपन्यास के जरिए प्रेमचंद 1936 में ही आने वाले युग व व्यवस्था का संकेत कर देते हैं। इस दृष्टि से यह उपन्यास प्रेमचंद के यथार्थवादी दृष्टिकोण की प्रकाष्ठा है और उनका यही दृष्टिकोण उन्हें भविष्योन्मुखी भी बनाता है।

प्रेमचंद ने अपने युग की नब्ज को पहचान लिया था और यही वजह है कि वे होरी के जरिए अपने युग के तमाम राजनीतिक-सामाजिक और आर्थिक संबंधों की पड़ताल कर लेते है। उन्होंने यह दिखाने का प्रयास किया है कि शोषण और जुल्म के आधार पर टिकी हुई सामंती व्यवस्था अब टूटने वाली है और उसकी जगह एक नयी पूंजीवादी व्यवस्था जन्म लेने वाली है। जाहिर सी बात है कि एक व्यवस्था के टूटने तथा दूसरे के आकार लेने के क्रम में सारी स्थितियां वैसी नहीं रह जायेगी जैसी आज हैं।

यह अकारण नहीं है वि कि प्रेमचंद गोदान में ग्रामीण और शहरी दोनों कथाओं को समाहित करते हैं। यदि ग्रामीण कथा के अन्तर्गत वे किसानी जीवन की त्रसदी को उद्घाटित करना चाहते हैं तो शहरी कथा के अंतर्गत वे नयी व्यवस्था और समाज की वास्तविकताओं को भी सामने लाना चाहते हैं। वस्तुतः ग्रामीण और शहरी कथा मिलकर न केवल युगीन भारत का समग्र प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती है बल्कि इसमें भविष्य के भारत की धड़कनों को भी सुना जा सकता है।

गोदान की सबसे बड़ी समस्या सामंतवादी व्यवस्था है। इस व्यवस्था के कारण ही होरी जैसा किसान शोषण और दमन के चक्र में पीसता है। वह यदि झूठे मान-मरजाद, कर्ज की समस्या, लोभ-लालच, ईर्ष्या, जाति-बिरादरी का भय और भाग्यवाद जैसे सामंती मूल्यों से घिरा हुआ है तो इसलिए क्योंकि यह उस युग का सच है और उसे स्वीकारने के लिए होरी विवश है। सामंती व्यवस्था ने अपने जो जाल फैलाए हैं उससे निकालना मुश्किल ही नहीं, असंभव है क्योंकि इसके कारण समाज का जो ताना-बाना निर्मित हुआ है वह शोषण की एक ऐसी शृंखला तैयार करता है जिसमें किसानों का पफंस जाना बहुत स्वभाविक है।

प्रेमचंद के युग का जो समाज है व्यक्ति उसमें से बाहर नहीं निकल सकता है चाहे तो पलायन कर सकता है और यही वजह है कि गांव के जमींदार, महाजन, पंचायत, प्रोहित वर्ग और पुलिस, कचेहरी आदि जैसी शक्तियों से लड़ने के बजाए गोबर पलायन कर जाता है। वस्तुत इस व्यवस्था से इंसाफ और अधिकार की अपेक्षा करना बेमानी है।

प्रेमचन्द्र ने गोदान में होरी की त्रसदी के मूल बिन्दु के जरिए यह दिखा दिया है कि सामंती व्यवस्था का विघटन अब तय है। किन्तु इसके साथ-साथ उन्होंने भविष्य में जो पूंजीवादी व्यवस्था आने वाली है उसकी ओर भी संकेत किया है। यहाँ उपन्यासकार का दृष्टिकोण स्पष्ट है क्योंकि वह अपने युग की तमाम विसंगतियों और अन्तर्विरोधों से परिचित हो चुका है। इसीलिए वह दिखलाना चाहता है कि जब एक परंपरावादी व्यवस्था के बदले नयी व्यवस्था आयेगी तो उसका स्वरूप कैसा होगा।

प्रेमचंद शहरी जीवन से परिचित नहीं हैं और इसीलिए कि उनका यह चित्रण भी बहुत प्रामाणिक नहीं लगता, किन्तु शहरी सभ्यता किस ओर करवट लेने जा रही है इसका जो संकेत गोदान में मिलता है। सामंती व्यवस्था के टूटने का सीधा अर्थ है ग्रामीण व्यवस्था का टूटना और इसका नतीजा तीजा है है कि अपनी जीमन से जुड़े हुए किसान जमीन से बेदखल होंगे और अन्ततः मजदूर बनने के

लिए। विवश होंगे। गोदान में गोबर जैसे पात्र का शहरों की ओर पलायन यही संकेत करता है कि गांव का किसान अब शहरों की ओर गतिमान है।

पूंजीवादी सक्रियता के कारण शहरों में रोजगार के कई अवसर हैं। अतः जमीन का मोह छोड़कर अब शहरों की ओर पलायन एक स्वभाविक घटना है। शहर की व्यवस्था और यहाँ की आर्थिक संरचना में मजूदरों की एक अहम भूमिका होती है। अब मील कारखाने से लेकर कार्यालय तक की सारी व्यवस्थाएँ मजदूरों के हाथों ही संचालित होगी। इसके साथ ही मजदूरों में अपने श्रम और पराश्रमिक (वेतन) को लेकर भी एक जागरूगता बढ़ेगी, इसका भी यहाँ साफ संकेत है। किन्तु प्रेमचन्द ने शहर के मजदूर वर्ग की बढ़ती भूमिका के साथ-साथ उनके पूंजीवादी शोषण और उससे उत्पन्न समस्याओं को भी स्पष्ट किया है।

शहर में गोबर का रोजगार के लिए दर-दर भटकना, शराब पीना, जुआ खेलना और अपनी पत्नी से मार-पीट करना आदि इस नयी व्यवस्था के ही परिणम है। पिफर गोबर जैसे युवाओं का शहरों की ओर पलायन जहाँ उन्मीदें जगाती है वहीं शहर में मजदूर वर्ग की कुण्ठा और हताशा उनकी भाविष्य की त्रसदी को भी उद्घाटित कर देती है।

किसान जीवन के टूटने का एक अर्थ संयुक्त परिवार का बिखरना भी है। प्रेमचन्द दिखाते हैं कि गोबर अपनी पत्नी और बेटे को लेकर लखनऊ चला जाता है। इसके बाद ग्रामीण शोषण का शिकार होरी की जिन्दगी और भी दयनीय और कठिन बन जाती है। यह भविष्य का एक सच था जिसकी ओर प्रेमचन्द ईशारा करते हैं। गांव की जिन्दगी का अब कोई अर्थ नहीं हैं, रोजगार की तलाश में लोग गांव छोड़ देंगे और फिर गांव में यदि कोई बच जायेगा तो वृद्ध और छोटे बच्चे। आज ऐसा ही हुआ है।

पूंजीवादी शहरी सभ्यता की एक महत्वपूर्ण देन मध्यवर्ग का उदय है। प्रो- मेहता व मिस मालती आदि पात्र उसी मध्यवर्ग के प्रतिनिधि हैं जो समाज में बललाव को लेकर सबसे ज्यादा सचेत और सक्रिय हैं। प्रेमचन्द दिखाते हैं कि अब इसी वर्ग के हाथ में नेतृत्व होगा और शोषण दमन के खिलाफ लोगों को जागरूक करने में इनकी महती भूमिका होगी। इसका एक अच्छा उदाहरण मिल में मजदूरों की हड़ताल है।

मध्यवर्ग अब उस विचारधारा को भी जन्म दे रहा है जो समाजवाद के नाम से अपनी पहचान बना रही है और आने वाले समय में पूंजीवादी निरंकुशता को नियंत्रित करने में इसकी भूमिका बढ़ेगी। किन्तु मध्यवर्ग को लेकर एक दूसरा सच भी है जिसकी ओर उपन्यासकार ने संकेत किया है। यह मध्यवर्ग संवेदनशील और सक्रिय तो है किन्तु इसका दृष्टिकोण बहत स्पष्ट नहीं है। यह वर्ग बौद्धिक दृष्टि से सम्पन्न होकर भी व्यावहारिक नहीं है। प्रो. मेहता के विचारों से इस वर्ग का अन्तर्विरोध उजागर हो गया है। आज भी मध्यवर्ग का अन्तर्दवन्द और अव्यावहारिकता हमारे सामने है।

बदलते समाज और व्यवस्था में स्त्रियों की स्थिति मजबूत होने वाली है। नारी की दयनीयता यदि प्रेमचन्द के युग की पीड़ा है तो यह पीड़ा हमेशा नहीं रहने वाली है। मिस मालती जैसी स्त्रियां अपने अधिकारों और भूमिका को लेकर सचेत हैं। अतः पुरुषवादी समाज उन्हें तितली समझने की भूल नहीं कर सकता या न करें। 'गोदान' में कई बार धनिया भौ लड़ने-लड़ाने पर उतारू दिखती है। यह जुझारूपन और टकराने का साहस समय के बदलाव का संकेत है। नारी की सजगता ही आज नारी सशक्तीकरण तक पहुंची है जिसका आभास प्रेमचंद को बहुत पहले हो चुकर था।

पूँजीवादी समाज में एक और वर्ग की भूमिका बढ़ने वाली है जिसकी तरफ भी प्रेमचन्द ने स्पष्ट संकेत किए हैं और वह वर्ग है- प्रेस और मीडिया। सत्ता और जनता के बीच के संबंधों को जोड़ने वाली मीडिया आने वाले समय में परिवर्तनकारी भूमिका में होगी। किन्तु प्रेमचन्द ने पं. ओंकारनाथ के माध्यम से जहाँ प्रेस की महत्ता और भूमिका को रेखांकित किया है वहीं पंजीवादी शक्तियों से उसके गठजोड़ को लेकर उन्होंने शंका भी व्यक्त किया है। प्रेस जब पूंजी के हाथों बिक जायेगा तो वह लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए खतरनाक हो जायेगा।

असल में, गांधीवादी मूल्यों में आस्था रखने वाले प्रेमचन्द यहाँ चरित्र और नैतिकता को किसी सिद्धांत एवं विचारधारा के लिए अनिवार्य मानते हैं। प्रेमचन्द की यह शंकाए निर्मूल साबित नहीं हुई क्योंकि आज पूंजीवाद और मीडिया के गठजोड़ को हम देख सकते हैं। पूंजीवादी व्यवस्था ने एक और नए वर्ग को जन्म दिया है जो पहले नहीं था, वह नया वर्ग दलालों और मध्यस्थों का है।

'गोदान' में मि. तन्खा, मि. खुर्शीद, झिंगुरी सिंह और नोखेराम उस उभरते हुए नए वर्ग के ही प्रतिनिधि हैं

आज गांव से शहरों तक इस वर्ग का जाल ऐसा फैला हुआ है कि कहीं-न-कहीं इनसे हमारी टकराहट होती रहती है। यह पूंजी के धरातल पर जन्मा हुआ एक ऐसा वर्ग है जो हमारी समस्त व्यवस्था को दीमक की तरह चाट रहा है।

आने वाले युग में नारी चेतना के साथ-साथ विवाह संस्था को लेकर भी बहस होने वाली है। 'गोदान' में इसके सूत्र भी देखे जा सकते हैं। परम्परागत विवाह संस्था इतनी जड़ हो गयी है कि उसमें कोई उत्साह और उमंग नहीं है। निश्चित है कि भविष्य में इसके विकल्पों की तलाश की जायेगी। 'गोदान' में मि. खन्ना और गोविन्दी का संबंध ऐसा ही है तो प्रो. मेहता और मिस मालती का संबंध विवाह के विकल्प के रूप में सामने आता है। यहाँ दोनों के बीच सह-जीवन **(Live in Relation)** का जो संबंध है वह आज का मुख्य मुद्दा बन गया है।

इसी तरह गोबर-झुनिया और मातादीन-सिलिया का संबंध अन्तर्जातीय विवाह की ओर संकेत करते हैं। आज ये सारे परिवर्तन समाज में हो रहे हैं। मातादीन और सिलिया के संदर्भ में ही प्रेमचन्द ने भविष्य के एक और परिवर्तन की और ईशारा किया है। दलितों में एक नयी चेतना आने वाली है और अब वे संघर्ष की मुद्रा में दिखायी पड़ने वाले हैं। इसका संकेत 'गोदान' में मिल जाता है। यद्यपि उस समय इसको इतना समर्थन नहीं मिलता किन्तु आगे इस वर्ग में अपनी सामाजिक स्थिति को लेकर जागरूपता और सक्रियता बढ़ेगी, इसका पूर्वाभास हो जाता है। वस्तुतः मातादीन के मुंह में हड्डी सटाकर उसका विजातीयकरण करना भविष्य में दलित संघर्ष और टकराहट का ही संकेत है।

समयतः यह कहा जा सकता है कि 'गोदान' प्रेमचन्द के युग द्रष्टा होने का प्रतिपफल है जो न केवल किसानी जीवन की त्रसदी तक सीमित है बल्कि भविष्य में आकार लेने वाली व्यवस्थाओं तक विस्तार पा लेता है। वस्तुतः कोई रचना या रचनाकार इस अर्थ में ही बड़ा होता है कि वह अपने युगीन संवेदनाओं के साथ-साथ भविष्य में होने वाली हलचलों की आहट कितना स्पष्ट सुन पाता है। यहाँ प्रेमचन्द अपने युग के साथ मौजूद तो है ही उस युग की ओर संकेत भी करते हैं जो आजादी के बाद रूप ग्रहण करने वाला है।

## गोदानः शिल्प पक्ष / दोहरा शिल्प

'गोदान' न केवल हिन्दी साहित्य बल्कि सम्पूर्ण भारतीय साहित्य की एक रचनात्मक उपलब्धि है। इसे किसानी जीवन का महाकाव्य कहा जाता है। किन्तु 'गोदान' के शिल्प को लेकर आलोचकों में काफी विवाद भी रहा है। यही वजह है कि गोदान के मूल्यांकन के क्रम में इसके दोहरे शिल्प को लेकर बार-बार चर्चा होती रही है। प्रायः यह कहा जाता है कि गोदान में प्रेमचंद ग्रामीण और शहरी कथाओं के संयोजन में असफल रहे हैं और यहीं उनकी रचना का एक सबसे कमजोर पक्ष है।

गोदान के दोहरे शिल्प के विवाद को लेकर सबसे पहला सवाल तो यह है कि आखिर इसके पीछे प्रेमचंद का उद्देश्य क्या है और पिफर इसमें उन्हें कितनी सफलता मिली है? पहली बात तो यह है कि प्रेमचंद 1936 के भारतीय गांव की त्रसदी को उद्घाटित करना चाहते हैं और दूसरे एक परंपरागत सामंती ढाँचे के विघटन और उसकी जगह पूंजीवादी व्यवस्था के उदय को भी दिखाना चाहते हैं।

चूँकि प्रेमचन्द अब आदर्श से यथार्थ की भूमि पर आ चुके थे और उन्होंने अपनी युगीन असंगतियों और अन्तर्विरोधों को देख लिया था। अतः यथार्थ का उद्घाटन उनकी पहली प्राथमिकता है। वस्तुतः गोदान में उनका उद्देश्य एक बड़े कथाफलक को सामने रखना है और इसीलिए वे गांव से शहर तक की यात्र करते हैं। हां, यह बात अलग है कि इसमें उन्हें कितनी सफलता मिली है।

प्रेमचंद अपने शरू के उपन्यासों को छोड़कर शेष सभी में प्रायः दोहरे शिल्प का ही प्रयोग करते हैं जिससे उनकी एक अलग पहचान बनती है। किन्तु गोदान में हो आकर उनका यह शिल्प-विधान विवादित हो जाता है तो इसलिए कि गोदान का प्रायः एक महाकाव्य के रूप में मूल्यांकन होता है। यही वजह है कि विभिन्न आलोचकों ने गोदान के शिल्प को लेकर तीखी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त की हैं।

आचार्य नन्द दुलारे वाजपेई का मानना है कि 'गोदान' में न तो युगीन राष्ट्रीय संदर्भ है और न ही महाकाव्यात्मक औदॉत्य। इसकी ग्रामीण कथा तो ठीक है किन्तु शहरी कथा उतनी ही अप्रामाणिक और अधूरा है। इस तरह, यह युगीन भारत का संपूर्ण चित्र प्रस्तुत नहीं करता।

डॉ. शांतिप्रिय द्विवेदी ने लिखा है कि 'गोदान' में ग्राम कथा से इतर सारे प्रसंग क्षेपक से लगते हैं। इसी तरह डॉ- गुलाबराय का मानना है कि गोदान में गांव की कथा ही अधिकारिक कथा है जबकि शहरी कथा प्रासंगिक कथा है।

वस्तुतः इन आलोचनाओं के कारण ही कई बार गोदान के ग्रामीण और शहरी कथाओं को अलग-अलग जिल्दों में प्रकाशित करने का सुझाव भी दिया जाता रहा है। रेडियो रुपान्तर, वृतचित्र और फिल्मों के निर्माण में कई बार ऐसे प्रयोग किए भी गए हैं जो सर्वथा अनुचित है। सच तो यह है कि अपनी जिस शिल्प विशिष्टता के कारण 'गोदान' हिन्दी साहित्य की उपलब्धि है, प्रायः उसी की उपेक्षा की जाती रही है।

'गोदान' के दोहरे शिल्प पर उठे सवालों का जबाब देते हुए डॉ नलिन विलोचन शर्मा ने लिखा है कि- ***जिस तरह नदी के दो तट असम्बद्ध दिखते हैं किन्तु वे वस्तुतः असम्बद्ध नहीं रहते और उन्हीं के बीच से जलधारा बहती है। उसी तरह गोदान की असम्बद्ध-सी दिख पड़ने वाली दोनों कथाओं के बीच भी भारतीय जीवन की विशालधारा बहती चली जाती है। इन दोनों में यदि एक छोर ग्रामीण है तो दूसरा छोर नागरिक। दोनों का इतना समय और यथार्थ चित्रण अन्यत्र नहीं मिलता।"***

इस तरह, यह कहा जा सकता है कि गोदान में ग्रामीण और शहरी कथा आपस में मिलकर जो युगीन भारत की तस्वीर पेश करती हैं वह गोदान की कथानक का शिल्प-वैशिष्ट्य है। अतः इसे अलग करके देखना कथा के अन्तर्वस्तु को विखण्डित करने जैसा होगा।

यद्यपि प्रथम दृष्ट्या देखने पर ऐसा लगता है कि उपन्यास में गांव और शहर की कथाओं को एक बड़े ही कमजोर सूत्र में बाँधने का प्रयास किया गया है। इसको जोड़ने में यदि मुख्य रूप से रायसाहब और गोबर जैसे पात्र सहायक हैं तो गौड़ रूप में प्रो. मेहता और मिस मालती हैं जो गांव भ्रमण के लिए बेलारी आते हैं दूसरी ओर, गोबर गांव के किसान का बेटा है जो रोजगार की तलाश में गांव से पलायन करके शहर पहुंचता है।

इसी तरह कुछ खास तरह के पात्र गांव और शहर दोनों जगह हैं जो अपनी प्रकृति और पेशे से समान हैं। जैसे- नोखेराम, पं. दातादीन, झिंगुरी सिंह, दुलारी सहआइन आदि गांव में महाजनी प्रथा के प्रतीक हैं तो मि. खन्ना, मि. तन्खा और मिर्जा खुरशेद जैसे पात्र उसी महाजनी व्यवस्था के शहरी चरित्र हैं। गोदान में यह भी दिखता है कि झिंग्री सिंह का संबंध मि- खन्ना से बन रहा है। रायसाहब गांव से जुड़कर भी शहरी हैं क्योंकि शहर में उन्हें जीवन की सुविधाएँ मिल रहीं हैं। इस तरह, गांव और शहर में एक नया संबंध विकसित हो रहा है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रेमचंद यह दिखाना चाहते हैं कि गांव यदि सामंती व्यवस्था के बचे हुए अवशेष हैं तो शहर नई उभरती पूंजीवादी व्यवस्था के प्रतीक है। गोदान का कथा नायक होरी इस बदलाव के युग संधि पर खड़ा नायक है जहाँ वह यदि एक व्यवस्था से पीड़ित हैं तो वहीं दूसरी व्यवस्था में अपने को समायोजित करने में असमर्थ है। यहाँ यह साफ दिखने लगा है कि सामंती व्यवस्था पूंजीवादी घेरे में है और उसका टूटना तय है। पुरानी व्यवस्था के टूटने की ओर संकेत करते हुए प्रेमचंद यदि ग्रामीण शोषण को दिखाते हैं तो उसकी जगह जन्म लेने वाली नयी व्यवस्था के ताने-बाने को शहरी जीवन के चित्रण में उद्घाटित करते हैं।

यहाँ गांव और शहर को आमने-सामने रखकर उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि शहर का विकास गांव के शोषण पर ही टिका है। आज भी शहर के विकास का आधार ग्रामीण श्रम-शक्ति और उत्पादन ही है। शहरी कथा के मुख्य पात्र प्रो- मेहता, मिस मालती आदि मध्य वर्ग के प्रतीक हैं। यह वर्ग समाज में यदि अपनी भूमिका को सुरक्षित कर रहा है तो दूसरी ओर शहर के ही पं. ओंकारनाथ जैसे पात्र पूंजीवादी व्यवस्था के सबसे ताकतवर संस्था उस प्रेस और मीडिया के प्रतीक हैं जो धीरे-धीरे महाजनी सभ्यता का शिकर हो रहा है।

'गोदान' में प्रेमचंद ने दोहरे शिल्प के जरिए वस्तुतः होरी के उस मोहभंग की चित्रित किया है जो आजादी के बाद दिखने वाला मोहभंग है। किन्तु यहाँ एक मोहभंग खुद प्रेमचन्द का भी है क्योंकि तत्कालीन राष्ट्रीय आंदोलन के स्वरूप को देखकर प्रेमचंद निराश हैं और इसीलिए वे कांग्रेस की स्वराज की संकल्पना से अपना अलग विचार रखते हैं। यही वजह है कि गोदान में उन्होंने ब्रिटिश साम्राज्यवाद का प्रत्यक्ष विरोध न करके उसके शोषणवादी चरित्र को उद्घाटित किया है। उस समय जो शोषण, दमन, झूठे मान-मरजाद, धर्म और समाज के पाखण्ड आदि की जो समस्याएँ थी उनको उठाकर वे उन बदलावों की ओर संकेत करते हैं जो समय की जरुरत है।

इसी तरह, उनका ध्यान शहरी जीवन के अन्तर्विरोधों की तरफ भी गया है जहाँ मध्यवर्ग के हाथ में राष्ट्रीय राजनीति का नेतृत्व तो है किन्तु उसका दृष्टिकोण

अभी कुछ उलझा हुआ है। गाँव और शहर की कथा को जोड़कर प्रेमचन्द्र वस्तुतः उन बदलावों की ओर संकेत करते हैं जो युगीन सामाजिक-आर्थक और राजीतिक संरचना में भी दिखायौ पड़ रहे थे।

वैसे, अपनी बात कहते हुए प्रेमचन्द कहीं-कहीं इन दो कथाओं के बीच अनावश्यक प्रसंगों को भी जोड़ देते हैं जिससे कथा की असम्बद्धता कई बार खुलकर सामने आ जाती है। जैसे- रूपा द्वारा होरी को गाय भेजना जो उसकी मृत्यु तक नहीं पहचती। धनुष यज और शिकार का आयोजन, रुद्रपाल का प्रसंग आदि ऐसी कई घटनाएं हैं। किन्तु यहाँ यदि व्यापक दृष्टि डाली जाए तो हम देखते हैं कि इन छोटे-छोटे प्रसंगों का भी कुछ संकेत है। ये प्रसँग चाहे संयोगवश ही क्यों न आए हों, इनका महत्व है।

'गोदान' को यदि किसानी जीवन का महाकाव्य कहा जाता है तो ये विविध प्रसंग उसके विशाल चित्रपट को और व्यापक बनाते हैं। संभवतः इसे देखते हुए ही नलिनजी ने लिखा है कि 'गोदान एक ऐसे विशाल चित्रपट का प्रदर्शन है जो अनगढ़ होने के बावजूद प्रभावोत्पादक है और जिस पर कुंची चलाना किसी महाप्राण कलाकार के ही बूते की बात है।'

यहाँ सवाल उठता है कि ग्राम और शहरी दोनों कथाओं के चित्रण में प्रेमचन्द को कितनी सफलता मिली है? चूंकि प्रेमचंद के लिए गांव और उसका जीवन उनका आंखों देखा यथार्थ है इसलिए यहाँ वे अपने अनुभव की प्रामाणिकता तो दिखाते हैं किन्तु शहरी जीवन और शहरी पात्र के चित्रण में उनकी प्रामाणिकता कमजोर हुई है। चाहे रायसाहब का प्रसंग हो या मि- खन्ना-गोविन्दी और मि- मेहता-मालती के संबंधों का प्रसंग, प्रेमैचन्द यहाँ थोडे चकते-से लगते हैं। किन्तु फिर भी, जिस ग्रामीण जीवन की त्रसदी को वे रखना चाहते हैं वह शहरी कथा के सापेक्ष और तीव्र हो गया है।

समग्रतः हम कह सकते हैं कि गोदान की कथावस्तु और शिल्प-विधान पर असम्बद्धता का आरोप उचित नहीं है। ।। वस्तुतः गांव और शहर की कथा को आमने-सामने रखकर उन्होनें यदि ग्रामीण जीवन की त्रसदी को उद्घाटित किया है तो वहीं ग्रामीण व्यवस्था के टूटने से निर्मित होती एक नयी व्यवस्था और उसके सच को उद्घाटित करने के लिए शहर तक की यात्र की है। यह कथा का एक ऐसा व्यापक फलक है जो युगीन भारत का सच कहने में समर्थ है। यह कथा एक बड़े मकान के दो खण्डों में रहने वाले परिवारों की तरह नहीं है बल्कि एक ही भारतीय समाज के प्रांगण में रहने वाले एक संयुक्त परिवार की कथा है। अतः कथानक का यह दोहरा रूप उपन्यास की सीमा नहीं बल्कि उसकी उपलब्धि है।

## प्रो. मेहता-मिस मालती
## स्त्री-पुरुष संबंधों की पड़ताल

'गोदान' मूलतः कृषक जीवन की कथा है जिसमें प्रेमचन्द ने होरी के माध्यम से कृषि-संस्कृति और उसकी त्रासदी को उद्घाटित किया है। किन्तु इसके साथ ही 'गोदान' का एक पक्ष शहरी कथा भी है जिसमें प्रो- मेहता और मिस मालती जैसे चरित्रे के जोरेए प्रेमचंद ने मध्यवर्ग की भूमिका को भी रेखांकित करने का प्रयास किया है। हालांकि कुछ आलोचकों ने शहरी कथा को गोदान का क्षेपक कहा है किन्तु सूक्ष्म अवलोकन करने पर हम देखते हैं कि शहरी जीवन के जरिए उपन्यासकार ने कई महत्वपूर्ण मुद्दों को उठाया है।

वैसे तो गोदान के शहरी कथा में प्रो मेहता, मिस मालती और मि खन्ना जैसे कई मध्यवर्गीय पात्र है किन्तु इनमें प्रो- मेहता और मिस मालती के संबंधों का एक विशेष संदर्भ है जिसके निहितार्थ को हम दो महत्वपूर्ण विन्दुओं में देख सकते हैं-

***1. सामाजिक बदलाव में मध्यवर्ग की भूमिका।***
***2. स्त्री-पुरुष संबंधों की पड़ताल।***

इनमें जहाँ तक सामाजिक बदलाव में मध्यवर्ग की भूमिका का सवाल है तो प्रेमचन्द स्पष्ट रूप से इसे प्रो- मेहता के जरिए रखते हैं। प्रो- मेहता कर्म के पुजारी हैं और गरीबों के पक्षघर। वह उनके पक्ष में लिखते और बोलते हैं और यही कारण है कि रायसाहब जैसे अपने मित्रों को भी समय-समय पर खरी-खोटी सुनाने से नही चुकते। यहाँ तक कि मिस मालती से प्रथम परिचय के क्रम में वे उदासीन हैं तो इसलिए कि मिस मालती अभिजात्य वर्ग से हैं। वे पाश्चात्य संस्कृति में पढ़ी-लिखी महिला हैं जो पेशे से डाक्टर हैं। चूंकि उनका संस्कार पश्चिमी पूंजीवादी संस्कारों से निर्मित है, अतः प्रो- मेहता उन्हें गंभीरता से नहीं लेते। मिस मालती भी एक ऐसी आधुनिक स्त्री हैं जिनके लिए अर्थ बहुत मायने रखता है और वे अपने हाव-भाव का मूल्य भी जानती हैं।

पश्चिमी विचारक हार्वड मार्कुस लिखता है कि ***"औद्योगिक सभ्यता की ओर बढ़ते हुए समाज में औरतों के हाव-भाव का भी एक बाजार मूल्य विकसित हो जाता है और वह समाज की जरूरतों का अंग बन जाता है।"*** प्रारंभ मे मिस मालती अपने हर हाव-भाव को ऊंचे दाम में सुनाती हैं और यही कारण है कि प्रो- मेहता उनका प्रणय-निवेदन ठुकरा देते हैं। प्रो- मेहता पढे-लिखे मध्यवर्गीय चरित्र हैं और वे अपने वर्ग की भूमिका को पहचानते हैं, इसीलिए वे अपने जीवन को बहुत सहज और गरीबों के पक्ष में रखते हैं। खुद 200 रुपये का वेतन पाते हैं और जिसका बड़ा हिस्सा गरीबों पर खर्च कर देते हैं। उनके इस व्यवहार से मिस मालती प्रभावित होती हैं और धीरे-धीरे सामाजिक हित में मध्य वर्ग की भूमिका पहचान लेती है। यही वजह है कि ऊंची पफीस लेकर इलाज करने वाली मिस मालती अब मुपत में गरीबों का इलाज करती हैं। वे मेहता के साथ गांव जाती हैं और गरीब किसानों के स्वास्थ्य को लेकर सक्रिय होती हैं।

प्रेमचन्द वस्तुतः यह बतलाना चाहते हैं कि मध्यवर्ग के नेतृत्व के अभाव में कोई भी बड़ा सामाजिक परिवर्तन नहीं हो सकता अतः मध्यवर्ग को अपनी भूमिका पहचाननी होगी। यह मध्यवर्ग ही है जो गरीबों को शोषण और दमन से मपत करेगा और उसके प्रयास से ही एक नयी चेतना आयेगी। शहर में मि. खन्ना के मिल में जो हडतालें होती हैं वह इस बात का संकेत करती हैं कि अब किसान-मजदूर वर्ग संगठित हो रहा है और वह अपने अधिकारों के प्रति वह सचेत है।

जहाँ तक प्रो. मेहता और मिस मालती के आपसी संबंधों का सवाल है तो यहाँ चित्रित उनका यह संबंध हजारों हजार वर्ष पुरानी वैवाहिक संस्था पर प्रश्न चिह्न लगा देता है। यह एक नए तरह का संकेत करता है। वस्तुतः प्रेमचन्द अपने उपन्यास 'निर्मला' में विवाह के अतिमानवीय चेहरे को उद्घाटित कर चुके थे। गोदान में भी मि. खन्ना और गोविन्दी के वैवाहिक संबंध के माध्यम से वे विवाह संस्था के अमानवीय स्वरूप को ही सामने लाते हैं। प्रारंभिक वैवाहिक संबंध में कुछ अर्से बाद कोई गति अथवा हलचल नहीं रह जाती है और धीरे-धीरे इस संबंध के धागे कमजोर पड़ने लगते हैं।

नारी-मुक्ति आंदोलन से जुड़े चिंतकों ने यदि विवाह संस्था को जड़ से खत्म कर देने की वकालत की है तो उसके पीछे यही कारण है। यहाँ प्रेमचन्द भी मध्यवर्ग के शिक्षित पार्जी के माध्यम से विवाह के विकल्पों की तलाश करते हैं। इसी क्रम में उन्होंने प्रो मेहता और मिस मालती का पति-पत्नी बनकर रहने के बजाए मित्र बनकर रहना दिखाया है।

वैसे, प्रेमचंद इस समस्या के दूसरे पहलू को भी उठाते हैं। प्रेमचंद यह स्पष्ट करते हैं कि कोई भी विचार या क्रांतिकारी कदम यदि परिस्थितियों के बीच से नहीं उभरता तो वह आगे चलकर अप्रासंगिक बन जाता है। यही वजह है कि मिस मालती और प्रो- मेहता जिस 'फ्री-सेक्स' को पश्चिम से आयात करते हैं वह अंत तक बना नहीं रहता। गोदान में इसी कारण सामाजिक विकास के साथ-साथ ऐसे संबंधों का अंत भी दिखा दिया गया है। प्रेमचन्द ने यहाँ जो विवाह का विकल्प रखा हैं वह उचित तो है किन्तु अपने समय के अनुकूल नहीं है।

मालती, जो कभी प्रो- मेहता की उपेक्षा का शिकार होती है वही मालती आगे चलकर प्रो- मेहता के लिए समर्पित हो जाती हैं। प्रो- मेहता मिस मालती को पसंद तो करते हैं लेकिन अपनी पत्नी के रूप में उन्हें नहीं देखते। वे कहते हैं कि- ***मेरी पत्नी तो ऐसी होनी चाहिए जिसकी मैं पूजा कर सकूँ।"*** किन्तु आगे चलकर यही प्रो- मेहता मालती के चरणों में गिर जाते हैं और उनसे विवाह की भीख मानते हैं। बाद में मिस मालती विवाह के बंधन में नही बंधना चाहती। यह दृष्टिकोण का फर्क है।

असल में, मिस मालती पश्चिमी से जो बौद्धिकता और जनतांत्रिक मूल्य लेकर आयी है वह उन्हें प्राकृतिक स्वतंत्रता के पक्ष में खड़ा करता है। वे जानती हैं कि मेहता अधिकारवादी हैं। मेहता कह चुके हैं कि प्रेम को वे एक सीधी-साधी गऊ नहीं मानते बल्कि खूंखार शेर मानते हैं। अतः उनके साथ विवाह संबंध बनते ही मालती की स्वतंत्रता चली जायेगी और वे इसे खोना नहीं चाहती। इसीलिए मिस मालती भी उनसे वैवाहिक संबंध नहीं चाहती। मालती कहती है कि प्रेम के मन्दिर में तुम परीक्षक बनकर नहीं बल्कि उपासक बनकर प्रवेश पा सकते हो। दूसरी ओर, चूंकि वे अपने परिवार का आर्थिक आधार हैं और उनसे ही उनका परिवार चलता है, अतः इसीलिए भी वे विवाह के बंधन में बंधकर अपने अधिकारों को खोना नहीं चाहती।

वस्तुतः यह वही समय है कि जब पश्चिम के देशों में विवाह के प्रति उदासीनता दिखने लगी थी। पांचवें छठे

दशक में न्यूर्याक और फ्रांस जैसे शहरों में लोग लाइफ पार्टनर की जगह (Live-in Relation) की तरह रहने लगे वे तथा स्त्री-पुरुष के संबंधों को लेकर अब नैतिकता जैसी कोई बात नहीं रह गयी थी। इससे अपने पूर्व के अधिकारों को रखते हुए संबंध बनाए जा सकते थे और जरूरत पड़ने पर उनको छोड़ा भी जा सकता था। यह बगैर किसी वैवाहिक औपचारिकता के स्त्री-पुरुष का एक नया संबंध था।

प्रेमचन्द ने यह भी दिखाया है कि प्रेम जब यांत्रिक हो जाता है तब ऐसे संबंधों में रुढ़ियां जन्म लेने लगती हैं और फिर इसका परिणाम होता है संबंध का टूटना। किन्तु जिस समाज में व्यक्ति अपने को सामाजिक-ऐतिहासिक परिवर्तन के साथ बदलता रहता है उसमें प्रेम भी अपने को युगीन समाज के अनुकूल बनाता है। मिस मालती ने मेहता के कारण ही अपनी स्वार्थपरकता का त्याग किया और उदारवादी मूल्यों को अपने भीतर विकसित किया।

सच तो यह है कि प्रेमचन्द यह दिखाना चाहते हैं कि जो युगीन बदलाव है उसमें प्रेम और विवाह संबंधों को भी बदलना होगा। प्रो- मेहता और मिस मालती भी जनता की मुक्ति में अपनी भूमिका तलाश करके विवाह के बंधन में नहीं बंधते। मिस मालती कहती भी हैं कि ***"मित्र बनकर रहना स्त्री-पुरुष बनकर रहने से अत्यधिक सुखकर है। जिस दिन मोह से आसक्त हुए और बंधन में पड़े उसी क्षण हमारा मानवता का क्षेत्र सिकुड़ जाता है।"***

यह युग की मांग भी है कि व्यक्ति अपने जीवन को राष्ट्र के लिए समर्पित कर दे। इस दौरान कई राष्ट्रीय नेताओं ने स्वतंत्रता आन्दोलन में अपनी भूमिका को देखते हुए ऐसे संबंधों से बचने का प्रयास किया। मेहता और मालती भी एक नया रास्ता निकालते हैं जिसके तहते वे विवाह न करके राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम में अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं।

## होरी: भारतीय कृषक-समाज का प्रतिनिधि चरित्र

प्रेमचंद का गोदान एक महान औपन्यासिक उपलब्धि है। इसमें भारतीय किसानी जीवन का यथार्थ अपनी समग्रता और व्यापकता में उद्घाटित हुआ है। कथा नायक होरी इसमें भारतीय किसान का प्रतिनिधि बनकर आया है। होरी के माध्यम से प्रेमचंद ने भारत की ग्रामीण संस्कृति और उसकी विसंगतियों का यथार्थ चित्रण किया है।

होरी भारतीय किसान के समस्त गुण-दोषों को लेकर सामने जाता है। वह बेहद ईमानदार और संवेदनशील आदमी है। मानवमात्र के लिए उसके मन में सहानुभूति है। जीवन में अनेक विपत्तियों से घिर जाने के बाद भी वह आत्मसम्मान और नैतिकता की उपेक्षा नहीं करता।

होरी के जीवन का संघर्ष, उसकी विपत्तियां और उसका अन्त भारतीय किसानी वर्ग की सच्ची गाथा है। गोदान होरी के जीवन के ताने-बाने से बना एक ऐसा उपन्यास है, जो सम्पूर्ण किसानी जीवन के संघर्ष का महाकाव्य बन गया है। एक सामान्य किसान की तरह होरी अपने बैल-पशुओं, खेल-खेतिहार, घर-मकान से अपार व्यामोह रखता है। इस कीमत पर वह खेती-बारी को नहीं छोड़ता। वह उसकी प्रतिष्ठा है, प्राण है। वह स्वयं कहता है- "इस खेती से क्या मिलता है। एक आने की मजूरी भी तो नहीं पड़ती है। जो दस रुपये महीने का नौकर है, वह भी हमसे अच्छा खाता-पीता और पहनाता है। लेकिन खेती में जो मरजाद है, वह नौकरी में तो नहीं है।"

एक किसान की तरह होरी मानवीयता और मानवीय आस्था पर अटूट विश्वास रखता है। हर तरह की विपन्ता के बावजूद वह मानवीय आस्था और नैतिकाता को छोड़ना नहीं चाहता है- ***"नीति हाथ से न छोड़ना चाहिए बेटा, अपनी-अपनी करनी अपने-अपने साथ है बेटा जब तक जीता हूँ, मुझे अपने रास्ते चलने दे।"***

होरी एक उदार, सीधा-सादा, परिस्थितिवश स्वार्थी, किन्तु छल-प्रपंचविहिन किसान है। वह कामचोर नहीं है, परन्तु साधारण किसान की भाँति दब्बूपन भी उसके चरित्र की विशेषता है, जिसके कारण वह शोषण के जाल से कभी मुक्त नहीं हो पाता। होरी पुरानी पीढ़ी का प्रतिनिधि नायक है। उसे भी भारतीय किसानों की संस्कारगत मान्यताओं ने जकड़ रखा है और वह चुपचाप पुरानी लीक पर चलता रहता है। उसमें शोषण व उत्पीड़न के विरुद्ध न तो विद्रोह-भावना है और न ही परिवर्तन लाने का साहस। यथा स्थितिवादी होरी भाग्यवाद, मान-मरजाद और बिरादरी के नाम पर अभिशप्त जीवन जीने को मजबूर है।

यह होरी का मरजाद-बोध ही है कि बेटेवाले की ओर से कोई माँग नहीं होने पर भी वह अपनी बेटी सोना की शादी दो सौ रूपये कर्ज लेकर धूमधाम से करता है। यह

उसके मरजाद और कर्ज की आपसी रिश्ते की परिणति ही है कि वह अपनी दूसरी बेटी रूपा को दो सौ रूपये में एक अधेड़ रामसेवक के हाथों बेचने के लिए विवश हो जाता है। होरी संयुक्त परिवार का समर्थक है। भाईयो द्वारा अलगौझा कराए जाने पर उसका दुखी होना और गाय को जहर देने वाले भाई हीरा को अन्त में स्वीकार कर लेना ही उसके परंपरावादी हाने का घोतक है।

होरी भाग्यवादी है। परिस्थितियों से पराजित और व्यवस्था की विकल्पहीनता से थका हुआ होरी अपने को हमेशा भाग्य पर छोड़ता है। होरी को पंचायत का डांड़ भरना पड़ता है। तब भी वह कहता है- ***'पंच में परमेश्वर रहते हैं। उनका जो न्याय है, वह सिर आंखों पर।'*** पंचायत के निर्णय के विरुद्ध धनिया के विरोध करने पर होरी कहता है- ***"धनिया तेरे पैर पड़ता हैं चुप रह, हम सब बिरादारी के चाकर हैं बिरादरी ही तारेगी तो तरेंगे।"*** होरी का यह दब्बूपन कभी-कभी पाठकों में खीझ भी पैदा करता है, किन्तु उसकी यह विवशता उसकी पूरी पीढ़ी की विवशता है।

होरी सामाजिक प्रतिष्ठा को सर्वाधिक महत्व देता है। वह कोई भी ऐसा काम नहीं करता, जिससे उसे समाज से कंलकित होना पड़े। हीरा को पुलिस से बचाना, गोबर के कारण पंचायत का डांड भरना तथा समय पर महाजनों के रूपये वापस करना उसकी ईमानदारी और प्रतिष्ठा का परिचायक है। निजी तौर पर गरीबी और बेवसी में जीने के बावजूद होरी गौरवपूर्ण सामाजिक व्यक्तित्व रखता है, जो किसानी जीवन के अनुरूप ही है।

होरी प्रेमचंद की कल्पना की सृष्टि नहीं है, वह यथार्थ पात्र है, इसलिए सजीव और जीवंत है। उसका श्रम पर अटूट विश्वास है। वह परावलम्बी होकर नहीं जीना चाहता है। इसीलिए गोबर के घर छोड़कर चले जाने पर भी वह विचलित नहीं होता। दातादीन के साथ साझे में मजदूर बनकर भी निरंतर काम करता जाता है। होरी ने फुर्सत नाम के क्षण को जीवन में कभी नहीं देखा। वह कहता भी है कि ***"बीमार वह पड़ते हैं जो बीमार पड़ने की फुरसत पाते हैं। किसान और किसान के बैल को यमराज विश्राम दे तो विश्राम मिले।"*** श्रम और संघर्ष करते हुए चालीस वर्ष की आयु में ही उसका शरीर टूट जाता है। यह होरी के जीवन की त्रासदी ही है कि आजीवन कमर-तोड़ मेहनत करने के बाद भी उसे और उसके परिवार को न तो पर्याप्त भोजन मिल पाता है और न ही उसकी गाय रखने की एक मात्र साध पूरी हो पाती है।

होरी स्वभाव से संवदेनशील है। इसका यह स्वभाव समाज के सापेक्ष में ही नहीं बल्कि परिवार के संदर्भ में भी देखा जा सकता है। धनिया, गोबर, सोना और रूपा के साथ ही नहीं बल्कि घर की बह झुनिया के साथ भी वह आत्मीयपूर्ण व्यवहार करता है। कभी पराजय का अनुभव न करने वाला होरी रूपा की शादी रामसेवक से करने के बाद गहरे अवसाद और दुख बोध से ग्रसित हो जाता है तो इसलिए कि उसने मन में वात्सल भाव है।

इतना ही नहीं, जहर देकर गाय की हत्या कर चुका हीरा जब घर लौटकर होरी से मिलता है तो होरी सबकुछ भुलाकर बडे आत्मीय ढंग से उसे गले लगा लेता है। होरी सबकुछ भुलाकर बडे आत्मीय ढंग से उसे गले लगा लेता है। होरी के जरिए प्रेमचंद ने पारिवारिक रागात्मकता की महता को उद्घाटित किया है। यह भारतीय संस्कृति के अनुरूप ही है।

यह होरी की विशेषता ही है कि तमाम संकटों के झेलते रहने के बावजूद वह किसी से कोई शिकायत नहीं करता। वह अपनी विपत्तियों को हंसकर झेलता है और जीवन जीते चला जाता है। जमींदारी व्यवस्था के बोझ को हल्का करते हुए होरी व्यंग्यात्मक लहजे में कहता है- ***"इस मिलने-जुलने में ही हमारी कुशलता है। यह इसी सत्य की बरकत है कि द्वार पर मडैया डाल ली और किसी ने कुछ नहीं कहा।"*** रायसाहब के यहाँ जाने पर जब धनिया मुँह बिदकाने लगती है तब स्थिति की गंभीरता को हल्केपन में बदलते हुए होरी धनिया से कहता है- ***क्या ससुराल जाना है, जो पांचों पोषाक लायी है? ससुराल में भी तो कोई जवाने साली सलहज नहीं बैठी है, जिसे जाकर दिखाऊँ।"***

गोदान का होरी अपने व्यंग्य-विनोद के द्वारा मनुष्य के प्रति प्रेमचंद की इस धारणा को सही साबित करता है कि ***"मैं प्रकृति का पुजारी हूँ और मनुष्य को उसके प्राकृतिक रूप में देखना चाहता हूँ, जो प्रसन्न होकर हंसता है, दुखी होकर रोता है और क्रोध में आकर मार डालता है।"***

इस प्रकार हम देखते हैं कि गोदान में होरी का चरित्र एक सामान्य भारतीय किसान का चरित्र है। ईमानदारी, कर्मठता, सहनशीलता, आत्मीयता, भावुकता, भाग्यवादी दृष्टि, व्यंग्य-विनोद, मानवीय आस्था आदि होरी की चारित्रिक विशेशताएं हैं जो किसी भी भारतीय किसान

में देखी जा सकती है। होरी इस अर्थ में एक उदात्त नायक है कि आर्थिक विपन्नताओं को सहते हुए भी वह चरित्र के मानवीय आस्था का कभी विस्मरण नहीं करता है।

युग-संधियों पर खड़ा होरी संघर्षशील चतेना का प्रतीक है, जिसे तयशुदा पराजय का मुहँ देखना पड़ता है। वह एक व्यक्ति नहीं वर्ग है। वह एक ऐसा संश्लिष्ट और क्लासिक चरित्र है, जिसकी आत्मा में गहराई और गरिमा है। होरी की यह चारित्रिक महानता ही गोदान की महानता का कारण है।

## गोबर का चरित्र-चित्रण

प्रेमचंद गोबर के चरित्र का विकास पारिवारिक और वर्गीय चरित्र के परिप्रेक्ष्य में करते हैं। भारतीय परिवारों का ढांचा सामंती एवं एकाधिकारी है। चूंकि परिवार के शेष सदस्य पारिवारिक अर्थ पर अधिकार नहीं रखते, इसलिए उनकी स्थिति सर्वहारा की ही होती है। गोदान में गोबर का व्यक्तित्व अपने पिता होरी के सर्वथा भिन्न है। वह वर्तमान शोषक समाज-व्यवस्था के प्रति नई पीढ़ी की विद्रोही विचारधारा का प्रतिनिधित्व करता है।

गोबर का यह विद्रोह उसकी मानसिकता में निहित है। गोबर में जायदाद का मोह उतना नहीं है जितना होरी में है। होरी में तो यह मोह इतना ज्यादा है कि इसके लिए उसे अपनी बेटी तक बेचनी पड़ती है। गोबर से पाठक का परिचय तब होता है जब होरी से उसकी बातचीत होती है।

रायसाहब के यहां से लौटा हुआ होरी कहता है- ***"हमलोग समझते हैं कि बड़े आदमी बड़े सुखी होंगे लेकिन सच पूछो तो वो हमसे भी ज्यादा दुखी हैं।"*** यहां गोबर का जवाब है- ***"तो फिर अपना इलाका हमें क्यों नहीं दे देते। हम अपना हल-फाल, कुदाल सब देने को तैयार हैं, करेंगे बदला?"*** गोबर के तर्क से आहत होकर होरी रायसाहब के भक्ति-भाव की बात करता है लेकिन गोबर सवाल उठाता है- ***"भक्ति किसके बल पर, हम गरीबों के बल पर। पाप का धन पचे कैसे इसलिए भक्ति।"*** होरी इस तर्क के सामने ठहर नहीं पाता तब वह भगवान, भाग्यवाद और पूर्वजन्म का सहारा लेता है। गोबर इसके उत्तर में कहता है- ***"यहां जिसके हाथ में लाठी है वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है।"***

स्पष्ट है कि होरी और गोबर में यह वैचारिक फर्क चरित्र में गुणात्मक परिवर्तन ला देता है। होरी जहां पिछड़े हुए किसानों का प्रतिनिधि है, वहीं गोबर अपने हक एवं अधिकार के प्रति सजग किसानों की नई पीढ़ी का प्रतिनिधि है। गोबर का एक रूप प्रेमी का है और इस प्रेमी रूप में भी वह पारंपरिक जीवन से अलग है। झुनिया के गर्भवती होने पर वह पीछा छुड़ाने की कोशिश नहीं करता, उसे शाम को अपने घर पर छोड़कर शहर की ओर चल देता है। गोबर में अभी इतना नैतिक साहस नहीं है कि वह लोक-निंदा और झूठी सामाजिक प्रतिष्ठा परवाह न करे। दरअसल, गोबर एक संक्रमणकाल से गुजर रहा चरित्र है।

शहर में गोबर का परिचय मिर्जा खुर्शेद से होता है। वह उनकी प्रेरणा से शहर में खोमचा लगाकर कुछ कमाई करता है। पर उस पैसों को इक्के वालों, धोबियों इत्यादि को सूद पर देकर अच्छी कमाई कर लेता है। सवाल यह है कि जिस महाजनी व्यवस्था का गोबर स्वयं विरोधी है, वह अर्थोपार्जन के लिए उसी महाजनी तौर-तरीके को क्यों अपनाता है।

दरअसल, अशिक्षित या अल्पविकसित समाज में रोजगार के नए रास्तों का पता नहीं होता, इसलिए लोग उन्हीं रास्तों पर चल निकलते हैं जिन रास्तों पर वे स्वयं पीड़ित या शोषित होते रहे हैं। इसीलिए गोबर 'पार्ट टाइम जॉब के रूप में महाजनी को अपनाता है, लेकिन उससे जुड़ते ही गोबर में कुछ पूंजीवादी विकृतियां उभर आती हैं।

जब तक गोबर गांव में था तब तक वह पैसे के उपयोग से वंचित होने के कारण उसके मोह से भी वंचित था। पूंजीवादी सम्यता के कारण ही उसमें व्यक्तिवादी आत्मकेन्द्रन की प्रवृति बढ़ती है। गोबर में अपनी उपार्जित को भोगने और संरक्षित करने की व्यक्तिवादी प्रवृति बहुत उग्र हो जाती है। यही वजह है कि अपने संरक्षणकर्ता मिर्जा को भी वह उधार पैसा नहीं देता बल्कि उल्टै उन्हें शराब न पीने का नैतिक पाठ पढ़ा देता है, जबकि आगे चलकर वह स्वयं मद्रद्यपान की कुप्रवृति का शिकार बनता है।

सम्पति धीरे-धीरे व्यक्ति की मानवीय संवेदना को कंद कर देती है। लेकिन गोबर में ऐसी प्रवृतियां स्थिर और जड़ रूप में हमेशा नहीं बनी रहती। गोबर शहरी जीवन के प्रथम चरण में पंजीवादी व्यक्तिवाद से ग्रस्त तो होता है परन्तु वैयक्तिवादी रुग्णता की ओर नहीं बढ़ता है। यही कारण है कि गांव लौटकर वह महाजनों की दुर्गति करता है।

गोबर टूटते हुए संयुक्त परिवार के ऐतिहासिक सच को स्वीकार करता है। वह अपने पिता को कर्ज से मुक्ति का प्रयोस एक स्तर तक ही करता है। जब वह देखता है कि कर्ज मुक्ति का यह रास्ता उसे तबाह कर रहा है तो वह उसे छोड़ देता है। वह अपनी माँ से कहता है- ***"दादा चाहते हैं कि सारा कर्जा मैं दूं, बेटियों का ब्याह मैं करूं, जैसे मेरा जीवन तुम्हारा देना भरने के लिए है।"*** स्पष्ट है कि गोबर में वैयक्तिक उपभोग की प्रवृति बहुत बढ़ गई थी। यह शहरी पूंजीवादी सभ्यता का असर है जिसे लेकर गोबर गांव आया है।

शहर में दुबारा लौटकर गोबर खन्ना के शक्कर मील में मजदूर बन जाता है। औद्योगिक सम्यता सिर्फ मजदूरों के शोषण के लिए ही जिम्मेवार नहीं है बल्कि वह उनके नैतिक पतन का भी बुनियादी कारण है। औद्योगिक सम्यता में परिश्रम और पारिश्रमिक का सही अनुपात स्थापित नहीं हो पाता। अतः धीरे-धीरे मजदूरों की के जिंदगी में अलगाव का बोध पनपने लगता है। जो गोबर एक समय झुनिया पर अपनी जान न्यौछावर करता था, वही गोबर अब बात-बात पर झुनिया को पीटता है।

हद तो तब हो जाती है जब झुनिया के पुत्र लल्लू की मौत दवा-दारु के अभाव में होती है। सांत्वना प्रदर्शित करने के बजाय गोबर झुनिया को मन बहलाव की वस्तु समझता है। प्रेमचंद गोदान में गोबर और झुनिया के बीच में सिर्फ अलगाव की स्थिति ही चित्रित नहीं करतें बल्कि उस पूंजीवादी शोषणमूलक प्रक्रिया को भी उदघाटित करते हैं जिसके भीतर से अलगाव का बोध पैदा होता है।

गोबर शहर में मील मजदूर है, उसी समय मील में हड़ताल होती है। हड़तालियों में गोबर सबसे आगे रहता है। इस जंग में मजदूरों की हार होती है। गोबर के सर पर चोट लगती है और वह घायल होकर गिर जाता है। गोबर का घायल होकर गिरना मजदूर आंदोलन की विफलता है। प्रेमचंद स्पष्ट रूप से यह बतलाना चाहते हैं कि जब तक मजदूरों को सही नेतृत्व नहीं मिलेगा तब तक ऐसे आंदोलनों को जीता नहीं जा सकता और इसके लिए मध्यवर्ग को अपनी सही भूमिका निभानी पड़ेगी।

गोबर का गांव से शहर आना इस बात का प्रतीक है कि आजादी के पूर्व ही गांव से विस्थापित होने की प्रक्रिया शुरू हो चुकी थी। इस विस्थापन में शोषण के वे सारे चक्र थे जिसे कभी प्रेमचंद लगान कहते हैं, धर्म कहते हैं तो कभी महाजनी व्यवस्था कहते हैं। गोबर अपनी ताकत भर इस ढांचे का विरोध करता है। वह इस बात को समझ चुका है कि यहां जिसके हाथ में लाठी है, वह गरीबों को कुचलकर बड़ा आदमी बन जाता है। इसीलिए वह गांव या शहर में कहीं भी रहे लेकिन अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाता रहता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि 'गोदान' में गोबर का चरित्र विकासशील है। उपन्यासकार ने गोबर को उस नई पीढ़ी के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया है जो वर्तमान पूंजीवादी शोषक समाज व्यवस्था के उन्मूलन के लिए आक्रोश लिए हुए है। परन्तु उपन्यासकार गोबर से कहीं भी सक्रिय विद्रोह नहीं कराता जो वस्तुतः उस नई पीढ़ी की युग-सौंमा है।

## रायसाहब का चरित्र-चित्रण

ठाकर अमरपाल सिंह जिनसे गोदान में रायसाहब के नाम से पाठक परिचित होते हैं, तत्कालीन युग के उन जमींदारों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिन्होंने युग के अनुरूप अपने को शोषक के रूप में परिवर्तित कर लिया है। किन्तु रायसाहब, अन्य जर्मीदारों से इस मायने मै बिल्कुल भिन्न हैं कि अन्य जर्मीदार पात्र जहां सामंतवादी हैं वहीं रायसाहब नव-सामंतवादी। रायसाहब राष्ट्रवादी आंदोलन में कूदते हैं और दो बार जेल भी हो आते हैं। होरी से घुल-मिल कर बातें करते हैं। अपनी जमीन गांव के पशुओं की चराई के लिए छोड़ देते हैं।

एक किसान कहता है- ***"भला हो रायसाहब का जिन्होंने अपनी जमीन गायों की चराई के लिए छोड़ दी है और साफ कह दिया है कि चाहे जितने दाम मिले यह जमीन नहीं जाएगी।"*** स्वयं रायसाहब जर्मीदारों की निर्दयता को कोसते हैं। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि रायसाहब शोषण के सवाल पर दूसरे जमींदारों से बिल्कुल भिन्न हैं। मिलनसारिता, सहृदयता और मृदुभाषिता उनके गुण हैं और यही गुण उन्हें नव-सामंतवादी पॉरमाणित करते हैं।

गोदान में कभी-कभी ऐसा लगता है कि इस जमींदार वर्ग में एकता नहीं है। खासकर रायसाहब और राजा सूर्यप्रताप सिंह में चुनावी प्रतिद्वंदिता देखकर पाठक को ऐसा भ्रम होता है। लेकिन जैसे ही रायसाहब चुनाव जीतते हैं, राजा सूर्यप्रताप सिंह अपनी बेटी का विवाह प्रस्ताव लेकर आ जाते हैं। यह यह दीगर बात न है कि यह शादी नहीं

होती, परंतु इस घटना से जर्मीदारों का आंतरिक तालमेल उजागर होता है। दोनों शोषण का हथियार इस्तेमाल कर विलासी जीवन चाहते हैं।

प्रेमचंद ने बड़ी सटीक टिप्पणी की है- ***"गुफावासी मनुष्य दोनों व्यक्तित्वों में जीवित था, रायसाहब ने उसे अपने वस्त्रे से ढक दिया था और राजा सूर्यप्रताप सिंह में वह बिल्कुल नग्न था।"*** जाहिर है कि रायसाहब नव-सामंतवादी हैं जबकि राजा सूर्यप्रताप सिंह सामंतवादी। गोदान में रायसाहब देशभक्ति के लिए जेल भी जा चुके हैं।

दरअसल रायसाहब की देशभक्ति शोषण का नया औजार है। देशभक्ति छदम है, राजभक्ति असली है। सत्याग्रह आंदोलन में भाग लेने के कारण ही जनता की नजर में वे ऊंचे हैं। इससे उनके असामियों पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि उनकी जर्मीदारी में प्रजा नहीं लूटती थी। प्रेमचंद के शब्दों में ***"रायसाहब ऐसे शेर हैं जिन्होंने गरजना और गुर्राना छोड़ दिया है और मीठी बोली सीख ली है।"*** रायसाहब का यह पूरा चरित्र पंचतंत्र के उस बूढे शेर की याद दिलाता है जो शिकार न करने की अवस्था में मीठे वचनों से बुलाकर शिकार ग्रहण करता है।"

मेहता इस चरित्र को समझते हैं इसीलिए वे कहते हैं- "यह ठीक है कि आप अपने असामियों के साथ अच्छा व्यवहार करते हैं लेकिन क्या इसमें आपका स्वार्थ नहीं है। विष खिलाकर मारने वालों की अपेक्षा गुड खिलाकर मारने वाला कहीं अधिक सफल हो सकता है। धीमी आंच पर भोजन जितना स्वादिष्ट पकता है उतना तेज आंच पर नहीं।" मतलब यह कि रायसाहब की मिलनसारिता, मृदुभाषिता, राष्ट्रवादिता केवल इसलिए है कि शोषण को निर्विरोध अंजाम दिया जा सके।

रायसाहब में धर्म और दान की प्रवृति भी दिखाई पड़ती है, परन्तु यह वह दान नहीं था जिसे हम महान दान की श्रेणी में रखें। यह दानवीरता केवल अपने बराबर वालों को नीचा दिखाने के लिए था। रायसाहब को भक्ति विरासत में मिली है परन्तु यह भक्ति उन्हें सहृदय और उदार नहीं बनाती बल्कि वह उनके शोषण के स्वरुप को छिपाने का माध्यम है। लेकिन शोषण का यह भक्ति वाला औजार बहत प्राना हो गया था और जनता इस दांव-पेंच को समझ चुकी थी इसलिए नव-सामंत रायसाहब धनुष यज के कलेवर में इसे नए रूप में लेकर आते हैं। धनुष यज तो बहाना है, असली उद्देश्य शगुन और चढ़ावें के रूप में मिलने वाला पैसा है और अपने मित्र को उपकृत करने का एक माध्यम है।

रायसाहब कई जगहों पर जमींदारी के विरोध में बातें करते हैं। उनका कहना है- ***"जब तक संपत्ति की यह बेड़ी हमारे पैरों से न निकलेगी हम मानवता के उस रूप को न पा सकेंगे जिसपर पहुंचना ही जीवन का अंतिम लक्ष्य है।"*** रायसाहब के भीतर वर्गीय हस्ती मिट जाने की यह बेचैनी इसलिए दिखती है कि उन्हें लगने लगा है। आने वाले समय में जमींदारों की केन्द्रीय भूमिका नहीं रहेगी। रायसाहब इसलिए आत्मनिंदा या वर्गीय भर्त्सना का रुख अपनाकर अपनी रियाया की सहानुभूति पाने और उसके मधुर शोषण के जरिए अपने वर्गीय स्वरूप को बचाने की तरकीब अपनाते हैं।

रायसाहब के चरित्र पर प्रेमचंद ने गोबर और मेहता के माध्यम से प्रकाश डाला है। ये दोनों ही पात्र लगभग एक-सी टिप्पणी करते हैं। रायसाहब की कथनी और करनी में फर्क है। गोबर कहता है। "यदि उन्हें हजार तरह का दुख है। तो अपना राजपाट हमें क्यों नहीं दे देते, हम अपना हल, फाल, कुदाल सब देने को तैयार हैं। करेंगे बदला? वह उनकी भक्ति को भी शोषण का एक परदा मानता है। वह कहता है- ***"यदि एक दिन खेत में ऊख बोना पड़ जाए तो सारी भक्ति भूल जाएं। मेहता भी रायसाहब के समाजवादी वक्तव्यों पर कुछ ऐसी ही टिप्पणी करता है। मेहता के अनुसार "या तो हम साम्यवादी हैं या नहीं हैं। हैं तो करके दिखाएं वैरना बकना छोड़ दें।"***

प्रेमचंद ने रायसाहब के माध्यम से जिस नव-सामंतीवादी चरित्र को उजागर किया है उसके माध्यम से वह यह बतलाना भी चाहते हैं कि पुराने सामंतवाद का ढांचा ध्वस्त होने के अंतिम कगार पर है। इस सामंतवाद की जगह ले रहे हैं रायसाहब जैसे नव-सामंतवादी या खन्ना जैसे पूंजीपति।

आजादी के बाद यह ऐतिहासिक सच है कि जमींदार अपने को बचाने के लिए या तो राजनीति में चले आए या बड़े पंजीपतियों के साथ गठजोड़ कर लिया। पारंपरिक सामंतों की दशा दिनोंदिन खराब होते चली गई। रायसाहबे कौंसिल का इलेक्सन जीत कर पहले से ज्यादा ताकतवर हो जाते हैं। लखनऊ के अलावे शिमला और नैनीताल में कोठियां खरीद ली जाती हैं।

इस प्रकार, प्रेमचंद ने रायसाहब के चरित्र के माध्यम से उस ऐतिहासिक सच को उदघाटित किया है जहां सामंतवादी प्राने कैचल को छोड़कर नए सामंतवाद के रूप में प्रतिष्ठित होते हैं। हाँ, यह सही है कि इस बदलाव में सब कुछ उन्हीं के पक्ष में नहीं रहता। शिक्षा के बढ़ते हुए प्रभाव से जीवन मूल्य बदल जाता है। इसका सबसे बड़ाँ उदाहरण रायसाहब के बेटे द्वारा सरोज के सौथ शादी करना है। रायसाहब को धक्का पहुंचता है लेकिन रायसाहब के चरित्र को देखते हुए यह सहज नहीं लगता है कि कुछ ही दिनों में इस धक्के कौ 'एडजस्ट' कर लेंगे। रायसाहब के चरित्र के इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि उनकी कथनी और करनी का अंतर उनके दोहरे व्यक्तित्व को उजागर करता है। कथानक में उनकी स्थिति इसलिए विशेष महत्वपूर्ण हो गई है कि वे ग्रामीण और नागरिक कथा को जोड़ने वाली कड़ी बन गए हैं।

## मिस्टर खन्ना और भारतीय औद्योगिकीकरण

गोदान में प्रेमचंद ढहती हुई सामंती व्यवस्था और उसकी जगह लेती हुई पूंजीवादी व्यवस्था का चित्रण किया है। पूंजीवादी व्यवस्था के केन्द्र में मिस्टर खन्ना हैं जो भारतीय पूंजीपतियों के प्रतिनिधि चरित्र हैं। वे 'व्यापार, व्यापार है कि स्थिति में विश्वास करते हैं। व्यापार और उद्योग में मानवतावाद नहीं चलता। दोस्ती के नाम पर वे रायसाहब की मदद करते हुए भी अपना कमीशन लेना नहीं भूलते।

मिस्टर खन्ना बैंक चलाते हैं, साथ ही गांव में उनकी महाजनी कोठी भी चलती है। गांव के किसानों का श्रम लूटकर तथा बैंकों में लोगों के जमा पैसे के बूते वे उद्योग खड़ा करते हैं। गांव के उखड़े हुए किसानीं को मजदूर बनाकर उनका दोहरा शोषण करते हैं। प्रेमचंद खन्ना के माध्यम से दिखाते हैं कि महाजनी सम्यता गांव से लेकर शहर तक अपना पांव फैला चकी थी। खन्ना के सामने रायसाहब जैसे जमींदार तक चिरौरी करते हैं। यह इस बात का प्रतीक है परंपरागत सामंतवाद की चूलें हिल गई हैं और उसकी जगह पूंजीवाद ने ले लिया है।

मि. खन्ना भी रायसाहब की तरह राष्ट्रवादी थे। मि- खन्ना का यह राष्ट्रवाद तत्कालीन पूंजीपतियों की रणनीतियों के तहत है। पैसे और राजनीति के ताकत के कारण ही वे किसी से दबना नहीं जानते। मि- खन्ना का खद्दर की पोशाक शोषक प्रवृतियों को छुपाने का एक औजार है। 1914 तक भारत में उद्योगों का विकास बहत धीमा था। ब्रिटिश शासन ने भारत के हस्तशिल्प और ग्रामोद्योग ध्वस्त कर दिया था। अंग्रेज चाहते थे कि भारत विदेशी मालों के लिए एक बड़ा बाजार बना रहे। यहां उसने उद्योगों को हतोत्साहित कर रखा था।

भारतीय उद्योगों से निकलने वाली वस्तुओं पर चंगी की दर बढ़ा दी गई थी। विदेशी उपेक्षा को देखकर ही तत्कालीन भारतीय उद्योगपतियों ने स्वदेश ने स्वदेशी आंदोलन का साथ दिया। वे चाहते थे कि विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार आंदोलन के दबाव में आकर ब्रिटिश शासन उन्हें उद्योग लगाने की छूट देगा। इसलिए तत्कालीन भारतीय उद्योगपतियों ने इंडियन नेशनल कांग्रेस को चंदा देकर उसे अपने राजनीतिक मंच के रूप में इस्तेमाल किया। वे जानते थे कि स्वराज में उनका उद्योग बेहतर ढंग से पनप सकता है।

प्रथम विश्व युद्ध के शुरू होते ही भारत में विदेशी वस्तुओं का आगमन अवरोध मुक्त नहीं रहा। 1906 से 1910 ई- के बीच में महज 10 लाख पौंड पूंजी भारत आई। बाध्य होकर ब्रिटिश शासन को उद्योग लगाने की छूट भारत में देनी पड़ी। खन्ना की शक्कर मिल इसी छूट के तहत खड़ी हुई थी। विदेशी पूँजी के भारत में न आने से ब्रिटिश सत्ता को जो नुकसान हो रहा था उसकी भरपाई के लिए भारतीय उद्योगों से निकलने वाली वस्तुओं पर टैक्स की दरें बढ़ा दी गई थी। । इस बढ़े हुए टैक्स का राष्ट्रवादी खन्ना कहीं विरोध नहीं करते। वे कहते हैं- ***"चुंगी से यदि पांच का नुकसान था, तो वेतने घटा देने से 10 का लाभ।"***

विश्व युद्ध के कारण बढी हई मंहगाई और वेतन घट जाने के कारण ही मजदूर हडताल पर चले जाते हैं। हड़ताली मजदूरों के साथ मि- खन्ना जनतांत्रिक तौर-तरीका अपनाने को तैयार हैं लेकिन उनकी मांग सुनने को तैयार नहीं। जिस तरह रायसाहब मीठा बोल सकते हैं लेकिन असामियों का शिकार करना नहीं छोड़ सकते उसी तरह मि- खन्ना मजदूरों से बातचीत कर सकते हैं, लेकिन अपना फायदा नहीं छोड़ सकते। समाज में पैसे का महत्व बढ़ गया था।

खन्ना जैसे पूंजीपतियों ने ही अपने और अपने जैसे हिस्सेदारों के मुनाफे के लिए औद्योगिक सर्वहारा की स्थिति को दयनीय बना दिया। औद्योगिक बस्तियों की जिंदगी में यदि सड़ांध भर आई है इसके जिम्मेदार ये खन्ना

जैसे शोषक पूंजीपति है। ताज्जुब यह है कि ऐसे शोषक खन्ना को भी मजदूरों से सहानुभूति की उपेक्षा है।

मि. खन्ना हो या रायसाहब, ये दोनों दो वर्ग के हैं और दोनों के अपने-अपने संगठन हैं जो इनके हितों के लिए काम करते हैं। 1857 में 'इंडियन चेंबर ऑफ कामर्स' का गठन हुआ था। और 1907 में इंडियन मर्चेट चेबर' बना। ये संगठन जमीदारों और पूंजीपतियों के थे, जबकि ये तादात में मुठी-भर थे। करोड़ों-करोड़ किसान का कोई संगठन नहीं था। प्रेमचंद यह समझाना चाहते हैं कि संगठित शोषकों के मोर्चे के खिलाफ जब तक कृषक भी अपना राष्ट्रव्यापी संगठन बनाकर नहीं उतरेंगे तब तक उनके बिखराव का फायदा समांत और पूंजीपति उठाते रहेंगे।

मि. खन्ना के मिल में आग लगती है। मिल जलकर पूरी तरह राख हो उठती है इस दुःख में खन्ना का चरित्र कुछ निखरा हुआ लगता है। वह पहले से ज्यादा मानवीय बन जाते हैं। पर ध्यान देने योग्य बात है कि क्या उनकी यह मानवीयता स्थायी रह जाएगी या रेगिस्तान में केवल एक बूंद जल साबित होगी, प्रेमचंद इसका भी संकेत करते हैं। खन्ना मिल को फिर से खड़ा करने की बात करते हैं। वे परिश्रमी हैं और पूंजीपतियों का सबसे बड़ा हथियार धूर्तता और चालाकी भी उनके पास है। इसे देखते हुए यह सहज विश्वास किया जा सकता है कि वे अपनी पुरानी स्थिति में पुनः लौट आएगे।

पूंजीवादी संस्कृति जिस औद्योगिकरण पर निर्भर है वहां मनुष्यता का कोई मूल्य नहीं है। वह सबकुछ को एक वस्तु के रूप में देखता है। इस मानसिकता का सबसे ज्यादा शिकार स्त्रियां होती हैं। वहां स्त्री-देह उत्पादन को बेचने में मददगार होती है। स्त्री अस्मिता का कोई सवाल नहीं होता। इसका प्रारंभिक रूप हमें गोदान में देखने को मिल जाता है। पढ़ी-लिखी और समझदार होने के बावजूद मिस मालती, खन्ना के लिए केवल भोग-विलास की ही वस्तु हैं। वस्तुतः खन्ना के माध्यम से प्रेमचंद औद्योगिकरण, भारतीय मजदूरों की दुर्दशा और आने वाले दिनों में व्यवस्था को नियंत्रित करने वाले पहलू के रूप में उजागर करते हैं।

## गोदान : आदर्शवाद बनाम यथार्थवाद

कृषक जीवन की त्रासदी 'गोदान' एक यथार्थ उपन्यास है। इसमें प्रेमचन्द ने अपने जीवन के समस्त अनुभव एक सूत्र में बाँध दिये हैं। गोदान में कोई सुधारवादी संदेश नहीं है, अपितु प्रेमचन्द समाज की करुण दशा का नग्न चित्रण प्रस्तुत करते हैं। इस उपन्यास के माध्यम से प्रेमचन्द ने यह संकेत किया है कि वर्तमान सामाजिक व्यवस्था इस कारुणिक स्थिति के लिए उत्तरदायी है, उसे कभी भी सुधार से दूर नहीं किया जा सकता। उसे तो संगठन से समूल नष्ट ही करना उचित प्रतीत होगा।

'गोदान' में होरी और धनिया का शोषक वर्ग से संघर्ष करते हुए जीवन के दुःखों की चक्की में पिसना और होरी की कारुणिक मृत्यु का यथार्थ चित्रण वर्तमान समाज-व्यवस्था को चुनौती देता है और होरी की मृत्यु के रूप में पूँजीवादी शोषक-व्यवस्था के मृत होने का भी संकेत करता है। गोदान में प्रेमचन्द क्रान्ति का स्पष्ट संकेत नहीं देते, इसे गाँधीवाद के बढ़ते हुए प्रभाव की छाया ही कहा जा सकता है। गोदान में होरी के माध्यम से भारत के उस कृषक वर्ग की यथार्थ जीवन-गाथा का चित्रण हुआ है, जो कारुणिक एवं संघर्षशील है।

गोदान में शुद्ध यथार्थ का चित्रण है। उपन्यास के आरम्भ से होरी जीवन में कटु यथार्थ का सामना करता है तथा जीवन के विभिन्न कोणों पर संघर्षों को सहता हुआ अंत में आर्थिक विषमता के चक्र में पिसता हुआ अल्पायु में ही मर जाता है। समाज का शोषक वर्ग किस प्रकार उस असहाय निर्बल प्राणी का शोषण करता है । होरी समाज के ठेकेदारों के हर आदर्श का पालन करता है फिर भी विवशता में उसे जेठ की कड़ी दोपहरी में जीविकोपार्जन करने के लिए काम करना पड़ता है। अन्त में उसी गर्मी में लू लगने के कारण अल्पायु में उसकी मृत्यु हो जाती है । इस प्रकार प्रेमचन्द जी इस उपन्यास में शुद्ध यथार्थवादी हो गये हैं।

गोदान के यथार्थवाद को कतिपय आलोचकों ने उदात्त मर्यादित, उदात्त यथार्थवाद के नाम से भी अभिहित किया। उनके यथार्थ चित्रण से पाठकों में एक समाज व्यवस्था के ऊपर क्रोध एवं असहाय निर्बल होरी के प्रति संवेदना एवं सहानुभूति उत्पन्न होती है। गोदान' के सारे पात्र किसी न किसी वर्ग विशेष का प्रतिनिधित्व करते हैं, उनमें व्यक्ति और वर्ग की विशेषताओं का ऐसा समन्वय हुआ है कि उनका व्यक्तित्व सजीव हो उठा है। उन सारे पात्रों के माध्यम से लेखक ने निष्क्रियता और आलस्य का परित्याग कर स्वाभिमान एवं आत्मरक्षा का संदेश दिया है। इस यथार्थवाद के सफल निरूपण में वे आदर्शवाद को आरोपित नहीं कर पाये। उन्होंने उपन्यास में जहाँ कहीं भी आदर्शवाद को स्थापित करने का प्रयत्न किया है, वहाँ उनकी कथा बोझिल और धूमिल हो गयी है और हाँ, जहाँ उन्होंने शुद्ध

यथार्थ के धरातल पर कदम रखा है, वहाँ वे यथार्थ का सशक्त, सजीव और कारुणिक दृश्य प्रस्तुत कर देते हैं। मन अनायास ही उन पात्रों के प्रति संवेदनशील हो उठता है।

प्रेमचन्द का आदर्शवाद उनकी कृतियों के एक ही पहलू को धूमिल करता है। वह है समस्या के सुन्दर निष्कर्ष निकालने की, परन्तु उनके अन्तर में बसा हुआ यथार्थवाद समस्या की जटिलता को चित्रित करने में बहुत कम सामंजस्य रखता है।

'गोदान प्रेमचन्द की उपन्यास-कला का चरमोत्कर्ष है। इसमें प्रेमचन्द पूर्वाग्रह का त्यागकर आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के धरातल पर पहुँच गये हैं। अव्यावहारिक आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की विफलता देखकर वे गोदान में यथार्थवादी हो गये। अतः उनकी मान्यता और कला का विकास दृष्टि में रखने से गोदान के सम्बन्ध में प्रेमचन्द की यह मान्यता अप्रभावी हो जाती है कि 'उपन्यास वे ही उच्चकोटि के समझे जाते हैं, जिनमें यथार्थ और आदर्श का पूर्ण सामञ्जस्य हो।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि प्रेमचन्द ने अपने अन्य उपन्यासों की भांति इसमें आदर्शवाद की प्रतिष्ठा करने का प्रयास नहीं किया, वे आदर्शवाद का मोह त्यागकर समाज के चित्रांकन में अधिक रमे हैं। साथ ही वे यह भी संकेत करते हैं कि समाज में व्याप्त कुरीतियों, अन्धविश्वासों, शोषणों के विरुद्ध क्रांति का उद्घोष करना उचित नहीं बल्कि उसे परिवर्तित करने पर अधिक बल दिया है। विचारक मेहता के रूप में आदर्शवाद की कुछ झलक अवश्य आ जाती है, परन्त यह झलक आदर्शवाद की अव्यावहारिकता और पराजय को ही सूचित करती है। जीवन भर कर्मठ रहकर और संघर्षशील होरी दयनीय और कारुणिक स्थिति में दम तोड़ देता है। यहाँ होरी नहीं बल्कि मानव समाज का दम टूटता है, आदर्शवाद की मृत्यु होती है।

अतः गोदान पूर्ण रूप से यथार्थवादी उपन्यास है। इसमें भारतीय समाज की तत्कालीन परिस्थितियों का पूर्णरूपेण, सजीव ऑकलन एवं चित्रण किया गया है।

## गोदान का नामकरण

प्रेमचंद का उपन्यास 'गोदान' मानवीय संवेदना और सामाजिक संस्कारों के खोखलेपन को लेकर चलने वाले समाज का पर्दाफ़ाश करता है। इसमें व्यक्ति विशेष की अपेक्षा व्यवस्था के खोखलेपन पर अधिक प्रकाश डाला गया है। गाय पालने की एक सामान्य आकांक्षा को होरी जिंदगी भर अपनी तमाम कोशिशों के बावजूद पूर्ण नहीं कर पाता है। फिर विडंबना ये कि जिंदगी भर की मेहनत के बावजूद जो किसान एक गाय नहीं खरीद सकता है उसके मरने पर संस्कार के नाम पर 'गाय' दान देने की बात कही जाती है। ये संस्कार व व्यवस्था कितनी ढोंगी और खोखली है, इसका सहज अनुमान लगाया जा सकता है।

क्या 'गोदान' जैसा यह सामाजिक संस्कार उचित व सार्थक है? जिस मानवीय संवेदना के लिए होरी तड़पता रहता है, घोर से घोर विपन्नता से तड़पता रहा, वह क्या मानवीय संवेदना उसे इस समाज में मिली है। सामाजिक संस्कारों की सार्थकता और औचित्य को लेकर उठने वाली इन्हीं व्यंग्यपूर्ण प्रश्नों की ओर 'गोदान' उपन्यास संकेत करता है।

उपन्यास का पूरा कथ्य होरी की मृत्यु के बाद गाय को दान में देने की बात को लेकर खुल पड़ता है। धनियाँ बहुत कुछ चाहने पर भी होरी की मृत्यु पर संस्कार के नाम पर गाय का दान नहीं कर सकती है। उसकी यह विवशता उसी के कथन से झंकृत होती है। धनियाँ कहती है कि ***"आज जो सुतल बेची थी, उसके बीस आने पैसे लायी और पति के ठंडे हाथ में रखकर सामने खड़े मातादीन से बोली बछिया, न पैसा, यही पैसे हैं, यही इनका गोदान है।"***

'गोदान' व्यंग्यात्मक उपन्यास है। सामाजिक, धार्मिक, अर्थव्यवस्था, पारिवारिक व्यवस्था, शहरी सभ्यता आदि पर गोदान में कुशल रूप से व्यंग्य कसा गया है। मुख्यतया व्यंग्यपूर्ण ढंग से उपन्यास यह तीखा बोध कराता है कि क्या यही तुम्हारी सामाजिकता, धार्मिकता है, जिस पर तुम गर्व करते हो। मानवीय संवेदना और सहयोग से दूर यह समाज किस तरह सार्थक है? व्यक्ति की भलाई के लिए बनाया गया धर्म किस तरह होरी का हित कर रहा है, क्या यही व्यवस्था का सच है? जो ईमानदार और मेहनत करने वाले होरी को विपन्नताग्रस्त बनाकर लू में मरने को छोड़ती है।

भ्रष्टाचार से पूर्ण समाज पर प्रेमचंद का व्यंग्य देखने लायक है। यद्यपि गोदान की व्यंग्यात्मकता वैसी नहीं है जैसी कि 'मैला आंचल' में है, बल्कि यह व्यंग्यात्मकता कबीर के अधिक निकट है जहां व्यवस्था पर व्यंग्य तो है किन्तु कलेवर व शैली की गंभीरता प्रेमचंद पकड़ कर रखते

हैं। यहां एक प्रकार की वैचारिक व्यंग्यात्मकता पाठक को देखने को मिलती है।

व्यंग्य से उपन्यास का प्रभाव तीव्रतर बन पड़ा है। समाज की विकृतियाँ अधिक स्पष्ट रूप से बोधगम्य बन पड़ी है। इन्हीं के संदर्भ में दबी पड़ी हुई मानवीय संवेदना पहचानी जाती है। गोदान प्रेमचंदकालीन समाज का उपन्यास है। लेकिन मानवीय संवेदना को जिस ऊंचाई के साथ लेकर यह चलता है वह पाठक में आश्चर्यजनक अनुभूति उत्पन्न करता है। इसीलिए यह सदा नवीन चेतना और स्फूर्ति देने वाला उपन्यास बन पड़ा है। मुख्यतया मानवीयता को ठुकराने वाली परिस्थितियों को फटकारते हुए प्रेमचंद ने ऐसी विकृतिपूर्ण परिस्थितियों से पाठक को सचेत किया है।

मानवीय मूल्यों और मानवीय संवेदना के महत्व का मुखरित करने के लिए प्रेमचंद ने गोदान में विपन्नता पूर्ण होरी के जीवन को विस्तार के साथ प्रस्तुत किया है। ईमानदारी और कर्मण्यता के बावजूद होरी विपन्न है। इसका कारण सामाजिक सहानुभूति और संवेदना का अभाव भी है। इसी संदर्भ में गोदान सहयोगपूर्ण और शांतिपूर्ण मानव जीवन के लिए संवेदना की आवश्यकता को झंकृत करता है। विशाल कथापटल, महान चरित्रों के पात्रों और परिवेश की विराट कल्पना के माध्यम से उन्होंने मानवता के इसी स्वर का मुखरण किया है। यही गोदान का विशाल कलेवर है।

गोदान में जनजीवन और समाज तथा धर्म की विविध गतिविधियों का विस्तृत चित्रण हुआ है। एक ही उपन्यास गोदान में हम जीवन की समग्रता को देख सकते हैं। संपूर्ण उपन्यास साहित्य के अंदर समाज एवं मानव भावनाओं के अधिक से अधिक जितने चित्र खींचे जा सकते हैं, उतने एक गोदान में देखे जा सकते हैं। वास्तव में गोदान विविध कथा वस्तुओं का संगठन है। नारी के त्यागमय रूप के अलावा उसके कर्मठ और चेतना संपन्न रूप को भी हम गोदान में देख सकते हैं। मालती, सिलिया, नारी के त्यागमय रूप को प्रस्तुत करती है तो धनियाँ, झुनिया, सोना और रूपा उसके कर्म और चेतना संपन्न रूप का परिचय देती है। इससे समाज में नारी की स्थिति को उन्नत और उत्कृष्ट बनाने की कोशिश स्पष्ट है।

जिस प्रकार से 'गोदान' की कथा वस्तु व कलेवर का विस्तार है, पात्रों, चरित्रों, घटनाओं आदि की प्रतीकात्मकता है उसे ध्यान में रखते हुए स्पष्ट है कि इस उपन्यास का नामकरण किसी पात्र या घटना विशेष के आधार पर नहीं किया जा सकता। इससे वह प्रभाविता नहीं आ सकती कि शीर्षक ही संपूर्ण कथावस्तु का दर्पण सरीखा प्रतीत हो सके। 'गोदान' शीर्षक में प्रेमचंद की प्रतीकात्मकता, व्यंग्यात्मकता, यथार्थवाद व युगदृष्टि का पूर्ण परिचय पाठक को मिलता है। तत्कालीन और सर्वकालीन शोषण व्यवस्था के चित्रण के लिए संभवतः 'गोदान' से बेहतर शीर्षक नहीं हो सकता।

------------------------------